Reg. No. (Registrar of Newspaper for India):JHABIL/2021/82126
Under Postal License No.:RN/231/2022-24

ISSN : 2583 - 7451
MAGZTER Registered Magazine

"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"

प्रबुद्ध ग्राम

PRABUDDHA GRAM

(Awakended Village)
(Quaterly Magazine of Agriculture and Rural Development)

जुलाई-सितम्बर, 2025
खंड - 05, अंक - 02

शिव ज्ञान से जीव सेवा

RAMAKRISHNA MISSION

RAMAKRISHNA MISSION ASHRAMA
MORABADI, RANCHI - 834008 (JHARKHAND)
0651-2551008,2551970 ranchi.morabadi@rkmm.org www.rkmranchi.org

JIVA: NABARD's Natural Farming Initiative

NABARD's JIVA project promotes agroecological transformation through natural farming, leveraging the social and natural capital of existing watershed and wadi projects. Currently in its pilot phase, JIVA is being implemented in 11 states across 5 agro-ecological zones.

Derived from the Sanskrit word meaning "life force," JIVA focuses on diversified crop systems, integration of livestock and trees, rejuvenation of biological processes, natural pest and nutrient management, and efficient water and soil moisture use. As natural farming is knowledge-intensive, JIVA emphasizes community engagement, knowledge exchange, local innovations, and capacity building.

The goal is to shift at least 75% of participating farmers from conventional monoculture to sustainable natural practices, reaching a 'tipping point' that transforms the agricultural landscape. JIVA aims to convert around 200 hectares per watershed and 200–500 acres per wadi project to natural farming, triggering a multiplier effect.

In Jharkhand, JIVA is being implemented in Ramgarh (Patratu) and West Singbhum (Chakradharpur) districts.

Key Components

Fodder Self-Sufficiency: Bringing fallow lands under multi-species fodder cultivation, integrating fodder crops and trees to support livestock and rural livelihoods. Bio-input Preparation: On-farm production of biostimulants like Beejamrit, Jeevamrit, Neemastra, etc., using cow dung, urine, neem, and other local materials. Poshan Gardens: Backyard nutrition gardens in lead farmers' homes to ensure a year-round supply of fresh, diverse vegetables, especially for women and children. The motto: "Grow what you eat and eat what you grow."

Success Story

Mrs. Komila Devi of Armadaag village transitioned from chemical to natural farming under JIVA. Trained by Mrs. Bati Devi (ERP), she set up a 10-decimal kitchen garden using the e-Agrifood ATM model, growing over 15 varieties of fruits and vegetables. This ensured household nutrition and generated surplus income, improving both health and livelihoods.

Reg. No. (Registrar of Newspapers for India) JHABIL/2021/82126. Under Postal License No.:RN/261/2025-27

प्रबुद्ध ग्राम

त्रैमासिक (द्विभाषीय) पत्रिका

खण्ड 05, अंक 02

जुलाई–सितम्बर, 2025

-: मुख्य संपादक :-

*स्वामी भवेशानन्द – सचिव, रामकृष्ण मिशन आश्रम

-: संपादक मंडल :-

*स्वामी अन्तरानन्द – सह सचिव, रामकृष्ण मिशन आश्रम
*डॉ. कमल बोस – प्रोफेसर संत जेवियर कॉलेज
*डॉ. अजीत कुमार सिंह – वरीय वैज्ञानिक, दि. के.वी.के., राँची
*डॉ. विशाखा सिंह – विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान), दि. के.वी.के., राँची
*डॉ. पंकज मिश्रा – सहायक प्राध्यापक, आर.के.एम. वे.री.

: स्वामित्व :

* रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, राँची के लिए

-: प्रकाशक :-

स्वामी भवेशानन्द, **मुद्रक** श्री गोपाल मोदी द्वारा अन्नपूर्णा प्रेस एवं प्रोसेस, 5 मेन रोड, राँची, झारखण्ड-834001, फोन : 0628-7999194 से मुद्रित एवं रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, राँची, झारखण्ड-834008 से प्रकाशित **संपादक** स्वामी भवेशानन्द

-: पत्रिका मूल्य एवं सदस्यता शुल्क :-

प्रति पत्रिका रू.40/-, वार्षिक मूल्य रु.150/- और
आजीवन सदस्यता (20 वर्षों हेतु) शुल्क रु.2500/- मात्र है।
सीमित संख्या में पूर्व प्रशिक्षणार्थियों के लिए 50% की छूट है।

-: सदस्यता हेतु :-

ऑनलाइन : www.rkmranchi.org
ऑफलाइन : रामकृष्ण मिशन आश्रम,
मोराबादी, राँची, झारखण्ड-834008, फोनः 0651-2551008, 2551970
ranchi.morabadi@rkmm.org **पर संपर्क करें।**

अनुक्रमणिका

	विषय	पृष्ठ
1.	मंगलम्	3
2.	बाल विथि	3
	2.1 सूर्यग्रहण क्यों लगता है?	3
	2.2 चंद्र ग्रहण क्यों लगता है?	4
3.	बोध कथा	4
4.	प्रांगण दर्पण	5
	4.1 60 दिवसीय निदेशालय पुनर्वास (डी.जी.आर.) प्रायोजित भूतपूर्व सैनिकों का कौशल प्रशिक्षण	5
	4.2 रांची जिले की कृषि उन्नति हेतु वार्षिक कार्य योजना पर की गई बैठक	6
	4.3 अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस पर कार्यशाला का आयोजन	6
5.	सफलता की कहानी	7
6.	ग्राम्यांचल	8
	6.1 विकसित कृषि अभियान का समापन	8
	6.2 मोटे अनाज के उत्पादन को बढ़ावा देने हेतु उन्नत प्रशिक्षण का आयोजन	8
	6.3 ठाकुरगांव में 30 किसानों को बांटे मूंगफली के बीज	9
	6.4 रामकृष्ण मिशन आश्रम के माध्यम से तिरलाकोचा गाँव में प्रेरणादायक शैक्षणिक कार्यक्रम	9
7.	कृषि विज्ञान संवाद	10
	7.1 धान की यांत्रिक रोपाई तकनीक एवं फायदे	10
	7.2 ब्रूसिलोसिसः मवेशियों और मनुष्यो में होनेवाली एक खतरनाक बिमारी	11
	7.3 झारखण्ड में धान की खेती में आत्मनिर्भरता	14
	7.4 धारणा से अनुकूलन तक जलवायु परिवर्तन की चुनौती	16
	7.5 धान का बिचड़ा (नर्सरी) उत्पादन : विधि एवं महत्व	20
	7.6 तिलहनी फसलों में खरपतवार नियंत्रण	22
	7.8 कृषि पराशर में वर्णित कृषि और मौसम विज्ञान पर प्राचीन अंतर्दृष्टियाँ	25
	7.9 मत्स्य पालन तालाब में चूने का उपयोग कब करें	28
	7.10 Deficit Irrigation : A strategy for achieving sustainable yield	30
	7.11 Battling Bacterial Wilt in Brinjal: What Farmers Need to Know	34

मंगलम्

प्राकृत मानव और जीवन का उद्देश्य

श्रीरामकृष्णवचनामृत प्रसंग शरणागति

ठाकुर ब्राह्मभक्त वेणीमाधव पाल के उद्यानगृह में उनके उत्सव में सम्मिलित होने आये हैं। मास्टर महाशय ने इस घर का जो वर्णन किया है, उससे ऐसा प्रतीत होता है कि वह वास्तव में एक साधनाक्षेत्र है। ठाकुर के आने की बात सुनकर भक्तगण विशेष रूप से आकर्षित हो वहाँ आये हैं। चारों ओर लोगों का मेला लगा है। ठाकुर ने हँसते हुए आकर आसन ग्रहण किया। यह जो वर्णन है, इसे विशेष रूप से ध्यान में रखने की आवश्यकता है। कल्पना कीजिए, उत्सव का आयोजन है, भीड़ उमड़ पड़ी है और उसके बीच आनन्दोद्भासित मुखमण्डल से युक्त ठाकुर हँसते हुए आते हैं और आसन ग्रहण करते हैं। भक्तगण स्थिर दृष्टि से उन्हें देख रहे हैं। कहना न होगा कि मास्टर महाशय ने मानो अपने मानस नेत्रों से ध्यान करते हुए इस दृश्य का वर्णन किया है। इसलिए हम भी मानो ध्यान करते हुए उस दृश्य को अपने मानस नेत्रों से देख पाते हैं।

ठाकुर ने कहा, 'यह रहा शिवनाथ। देखो, तुम लोग भक्त हो, तुम लोगों को देखकर बड़ा आनन्द होता है। गँजेड़ी का स्वभाव ऐसा होता है कि वह दूसरे गँजेड़ी को देखकर बड़ा प्रसन्न होता है।'

ठाकुर कह रहे हैं कि भक्त को देखकर भक्त को आनन्द होता है, और इसी आकर्षण से ठाकुर का यहाँ आना हुआ है। यद्यपि ब्राह्मभक्त सनातनधर्म के विरोधी थे, फिर भी उनमें ऐसी कुछ आन्तरिकता थी, जो ठाकुर को आकृष्ट करती थी।

इसके पश्चात् ठाकुर कह रहे हैं, 'जिनको देखता हूँ कि ईश्वर में मन नहीं है, उनसे मैं कहता हूँ तुम लोग थोड़ा उधर जाकर बैठो, अथवा कहता हूँ कि जाओ, बिल्डिंग (रासमणि की कालीबाड़ी से संलग्न कोठी आदि) देखो जाकर।'

हम जानते हैं कि जहाँ पर बहुत से लोगों का समागम होता है, वहाँ पर सभी एक ही मनोभाववाले नहीं होते। जो भगवद्भक्त है, वे तो ठाकुर के सान्निध्य में आकर, उनकी बातों को मनोयोगपूर्वक सुनते हुए आनन्द का अनुभव करेंगे, और जिनका मनोभाव ऐसा नहीं है, उन्हें स्वभावतः यह सब अच्छा नहीं लगेगा। अच्छा नहीं लगता यह बात हम चारों ओर आँखें घुमाकर देखने से ही समझ ले सकते हैं। असंख्य लोगों के बीच मुट्ठी भर लोग ही ऐसे होते हैं, जो भगवत्प्रसंग में आनन्द लेते हैं। बाकी लोगों के लिए तो वह अरुचि का कारण होता है।

बाल विथि

सूर्यग्रहण क्यों लगता है?

कहानी: 'चाँद की छुपन-छुपाई'

एक बार दिन के समय सूरज अपने पूरे तेज–तेज प्रकाश के साथ चमक रहा था। तभी चाँद ने सोचा कि चलो आज सूरज के साथ छुपन–छुपाई खेलते हैं। चाँद धीरे–धीरे सूरज और पृथ्वी के बीच आ गया और अपनी बड़ी छाया पृथ्वी पर डाल दी।

जिस वजह से पृथ्वी के उस हिस्से पर सूरज की रोशनी कुछ समय के लिए कम हो गई और

अंधेरा छा गया, जैसे रात हो गई हो। यही घटना सूर्य ग्रहण कहलाती है।

लोगों ने आसमान में देखा कि सूर्य अचानक गायब हो गया है, लेकिन असल में सूरज छुपा नहीं बल्कि चाँद ने उसकी रोशनी रोक दी थी। चाँद थोड़ी देर बाद अपनी जगह से हटा और सूरज की चमक वापस आ गई।

तो, सूर्य ग्रहण तब होता है जब चाँद, सूरज और पृथ्वी एक सीध में आ जाते हैं, और चाँद अपने आगे से सूरज की रोशनी को रोक देता है।

चंद्र ग्रहण क्यों लगता है?

कहानी: 'पृथ्वी की परछाई और चंद्रमा का रात का खेल'

एक रात चंद्रमा पूरी तरह चमक रहा था। अचानक धीरे–धीरे उसका प्रकाश कम होने लगा और वह पूरा या अधूरा काला होने लगा। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि पृथ्वी सूरज और चंद्रमा के बीच आ गई।

पृथ्वी की बड़ी छाया चंद्रमा पर पड़ने लगी, जिससे चंद्रमा अंधेरा होने लगा। इसे ही चंद्र ग्रहण कहा जाता है।

चाँद के अंधेरे होने का कारण ये है कि पृथ्वी सूर्य की रोशनी को चंद्रमा तक पहुंचने से रोक देती है। कभी–कभी चंद्रमा लाल या नारंगी जैसा दिखता है क्योंकि पृथ्वी के चारों ओर की हवा सूर्य की रोशनी को मोड़ती है और चंद्रमा तक पहुंचाती है।

चंद्र ग्रहण रात के समय होता है और इसे धरती के उस हिस्से से देखा जा सकता है जहाँ पूरी या आंशिक छाया पड़ती है।

बोध कथा

गरजो ही नहीं, बरसो भी (किसान और बगुले)

हाल ही में बोए गए धान के एक खेत को कुछ बगुलों ने अपने चरने का स्थान बना लिया था। कुछ दिनों तक किसान उन्हें भगाने के लिए हाथ में खाली गुलेल लिए उनके पीछे दौड़ा करता था। शुरू में तो बगुले आतंक के कारण भाग जाते, परन्तु कुछ दिनों बाद जब उन्होंने देखा कि गुलेल केवल हवा में ही चलती है, तो उन्होंने उसकी ओर ध्यान देना बन्द कर दिया और पूर्ववत् निश्चिन्त भाव से चरने लगे।

इस पर किसान के क्रोध की सीमा न रही। उसने अपनी गुलेल में कंकड़ डालकर अनेक पक्षियों को मार डाला। बचे हुए पक्षी तत्काल उसका खेत छोड़कर यह कहते हुए चले गए, 'अब हमारा यहाँ से विदा लेने का समय हो गया है, क्योंकि यह आदमी अब केवल हमें डराकर ही सन्तुष्ट नहीं होता है। अब तो वह हमें यह भी दिखाने लगा है कि हमारी कितनी दुर्गति कर सकता है।'

फुफकारने से काम नहीं बने,
तो काटना भी पड़ता है।

प्रांगण दर्पण

६० दिवसीय निदेशालय पुनर्वास (डी.जी.आर.) प्रायोजित भूतपूर्व सैनिकों का कौशल प्रशिक्षण

मोराबादी (रांची) : दिनांक 20 जून 2025 दिव्यायन कृषि विज्ञान केन्द्र, रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, रांची के तत्वावधान में निदेशालय पुनर्वास (डी.जी. आर.) प्रायोजित भूतपूर्व सैनिकों का कौशल प्रशिक्षण का समापन समारोह का आयोजन किया गया। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम निदेशालय पुनर्वास (डी.जी.आर.), रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से किया गया। समारोह की शुरुआत पूर्वाहन 10.30 बजे मुख्य अतिथि माननीय रक्षाराज्य मंत्री, भारत सरकार, श्री संजय सेठ, ब्रिगेडियर सौम्य बनर्जी, ब्रिगेडियर निरंजन कुमार (सेवानिवृत निदेशक), सचिव स्वामी भवेशानंद, स्वामी अंतरानंद, सह–सचिव, रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, रांची द्वारा वैदिक मंत्रोच्चार एवं दीप प्रज्जवलित कर किया गया। कार्यक्रम में सभी अतिथियों का स्वागत स्वामी भवेशानंद द्वारा अंगवस्त्र एवं पुष्प गुच्छ देकर किया गया।

मुख्य अतिथि श्री संजय सेठ ने देश की रक्षा करने में भूतपूर्व सैनिकों का अहम् रोल होने, भारत की सेना का अभूतपूर्व पराक्रम एवं भूतपूर्व सैनिकों के सेवानिवृत होने के बाद भी राष्ट्र की सेवा में विकसित भारत बनाने का संकल्प लेने का आह्वान किया। उन्होंने भूतपूर्व सैनिकों को जैविक मधु पालन एवं अन्य उद्दाम करने हेतु KVIC से लिंक करने का आह्वान किया।

विशिष्ट अतिथि श्री सौम्य बनर्जी ने निदेशालय पुनर्वास (डी.जी.आर.) एवं कृषि विज्ञान केंद्र, रांची द्वारा विभिन्न पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण का आयोजन सफलतापूर्वक संपन्न होने तथा गाँव, समाज एवं देश के विकास में भूतपूर्व सैनिकों के योगदान पर अपने विचार रखे।

स्वामी भवेशानंद महाराज ने स्वागत संबोधन में भूतपूर्व सैनिक प्रशिक्षनार्थियों से देश को समृद्ध एवं आत्मनिर्भर बनाने हेतु आह्वान किया। उन्होंने भूतपूर्व सैनिकों का कौशल प्रशिक्षण के उपरान्त देश की जी.डी.पी. बढाने में एवं देश के विकास के कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका होने का आह्वान किया। प्रशिक्षण समन्वयक डॉ. भरत महतो ने कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्र में संभावना, उद्दाम शुरू करने हेतु आवश्यक इनपुट एवं बैंक से जुड़कर लोन की उपलब्धता एवं प्रोजेक्ट प्रपोजल बनाने पर तकनीकी जानकारी दी।

विदित है की यह प्रशिक्षण कार्यक्रम दिव्यायन कृषि विज्ञान केंद्र, मोराबादी, रांची में 21 अप्रैल 2025 से 20 जून 2025 तक आयोजित की गयी। इसके अंतर्गत डेयरी, बकरीपालन एवं मुर्गीपालन विषय प्रत्येक में 20 दिवसीय प्रशिक्षण दी गयी। डेयरी फार्मिंग में गाय की देखरेख एवं प्रबंधन, चारा उत्पादन एवं चारा प्रछेत्र परिभ्रमण, मुख्य रोगों के लक्षण, उसका निदान एवं समाधान की तकनीकी जानकारी दी गयी। मुर्गीपालन के अंतर्गत ब्रायलर एवं लेयर मुर्गीपालन, ड्यूल पक्षी का पालन एवं प्रबंधन, मूल्य संवर्धन एवं योग पर विस्तृत तकनीकी जानकारी प्रदान की गयी। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षनार्थियों को डेयरी फार्म, दूध संग्रह केन्द्रों का भ्रमण, अनगड़ा के विभिन्न गांवों में बकरीपालन केंद्र का भ्रमण के साथ इन्हें सरकारी योजनाओं की नाबार्ड के पदाधिकारियों एवं पशु चिकित्सकों के द्वारा विस्तृत जानकारी दी गयी। प्रशिक्षण के दौरान इन्हें दिव्यायन के सफल भूतपूर्व प्रशिक्षनार्थियों द्वारा भी आपसी बातचीत एवं संबोधन कराया गया।

ब्रिगेडियर निरंजन कुमार (सेवानिवृत निदेशक) ने सैनिकों के सेवानिवृत होने के बाद जैविक खेती, पशुपालन एवं कृषि के क्षेत्र में संभावनाओं को जानकारी दी एवं उद्दाम की शुरुआत कर आत्मनिर्भर बनने का आह्वान किया। इस अवसर पर कुल 21 भूतपूर्व सैनिकों को प्रमाण पत्र वितरण किया गया।

मौके पर दिव्यायन कृषि विज्ञान केंद्र के वरीय वैज्ञानिक डॉ. अजीत कुमार सिंह, डॉ. राजेश कुमार, श्री संजय डिंडा, ई. ओ. पी. शर्मा, श्री गंभीर कुमार महतो व अन्य कई कार्यकर्ता उपस्थित थे।

कार्यक्रम का संचालन श्री प्रफुल्ल कुमार सीओ एवं धन्यवाद ज्ञापन डॉ. अजीत कुमार सिंह ने किया।

(स्वामी भवेशानंद)
सचिव

रांची जिले की कृषि उन्नति हेतु वार्षिक कार्य योजना पर की गई बैठक

दिनांक 8 मई को दिव्यायन कृषि विज्ञान केन्द्र, रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, रांची में 29वीं वैज्ञानिक सलाहकार समिति (SAC) की बैठक का आयोजन किया गया। इस महत्वपूर्ण बैठक का आयोजन भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद्– कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसन्धान संसथान (ICAR ATARI), जोन IV, पटना के तत्वावधान में किया गया।

कार्यक्रम की शुरुआत आई.सी.ए.आर. गीत और दीप प्रज्ज्वलन से हुई। डॉ. अजीत कुमार सिंह वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख, के.वी.के. रांची ने स्वागत भाषण प्रस्तुत किया। डॉ. डी. वी. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, आई.सी.ए.आर., अटारी पटना ने कार्यक्रम की रूप रेखा पर प्रकाश डाला।

मुख्य अतिथि के रूप में श्री विकाश कुमार, निदेशक समेती झारखण्ड ने वैज्ञानिकों, अधिकारीयों और कृषकों को नवाचारों और तकनीकि प्रयोगों को बढावा देने हेतु प्रोत्साहित किया। विशिष्ठ अतिथि स्वामी भावेशानंद जी महाराज, सचिव, रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, रांची ने सभा को संबोधित करते हुए बताया की अच्छे तकनीकियों को कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा किसानों तक पहुचाया जाय।

डॉ. आर. एस. पान, प्रधान वैज्ञानिक, आई.सी.ए.आर., पलांडू ने सब्जियों में रोग प्रतिरोधक प्रभेद के प्रचार प्रसार में सहयोग देने के लिए कहा। स्वर्ण वसुंधरा सोयाबीन की सब्जी की प्रभेद को बढ़ावा देने की बात कही।

सभा में जिला के प्रगतिशील किसान भी उपस्थित थे जिन्होंने अपनी गतिविधियों, समस्यों और अनुभवों को साझा किया।

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस पर कार्यशाला का आयोजन

दिनांक– 21 जून 2025, रामकृष्ण मिशन आश्रम मोराबादी राँची के प्रांगण में प्रत्येक वर्ष मे भाँति इस वर्ष भी अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस का आयोजन किया गया। इस वर्ष अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस का थीम 'एक पृथ्वी, एक स्वास्थ्य के लिए योग था। आश्रम परिसर में आज के इस महत्वपूर्ण दिन पर एक कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसका विषय वस्तु योग युक्त झारखंड व रोगमुक्त झारखंड हेतु हर आंगन योग' रखा गया था। कार्यक्रम की औपचारिक शुरूआत मंत्रोच्चार के साथ दीप प्रज्वलित की गई।

कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में प्रभात खबर समाचार पत्र के कार्यकारी निदेशक श्री रंजीत दत्ता शामिल हुए। कार्यक्रम की अध्यक्षता आश्रम के सचिव स्वामी भवेशानंद जी ने की।

कार्यक्रम में आश्रम के सह सचिव स्वामी अंतरानंद जी ने अतिथियों का स्वागत करते हुए योग का शारीरिक मानसिक व बौद्धिक रूप से जोड़ता है। उन्होने योग के संबंध में बताते हुए कहा कि योग विज्ञान पर आधारित एक सूक्ष्म चिकित्सा पद्धति है जिसे हम सभी को अपने दैनिक जीवन में अपनाकर रोगमुक्त होना है।

श्री आर॰ आर॰ पानीग्रही, योग साधक ने अपने संबोधन में कहा कि मस्तिष्क व मन से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का समाधान योग है। योग तनाव प्रबंधन का सफल उपाय है।

आश्रम द्वारा योग युक्त झारखंड के स्वप्न को पूरा करने हेतु 5 माह पूर्व राज्यस्तरीय योग प्रतियोगिता का आयोजन किया गया था जिसमें 1300 से अधिक प्रतिभागी शामिल हुए। आज के शुभ अवसर पर उत्तीर्ण हुए सभी विद्यार्थियों प्रतिभागियों को पुरस्कृत किया गया। इसमें विवेकानंद केन्द्रीय विद्यालय हजारीबाग की प्रांजल को प्रथम पुरस्कार 10000 रूपये पारितोषिक राशि प्रदान की गई।

इस शुभ अवसर पर आश्रम द्वारा संचालित 19 गदाधर अभ्युदय प्रकल्प शिक्षा संस्कार केन्द्रों के 1095 बच्चों ने योगभ्यास किए।

सफलता की कहानी

कपिलेश्वर बेदिया, बंधावाडीहः

कपिलेश्वर बेदिया ने वर्ष 2012 में रामकृष्ण मिशन आश्रम दिव्यायन से मत्स्य पालन का प्रशिक्षण लिया है। वे ग्राम बंधवाडीह, प्रखंड– अनगडा, जिला– रांची के निवासी हैं। मत्स्य पालन को इसने अपने जीवन का आधार बना लिया है। मछली पालन की देखभाल, पूरक आहार, दवा आदि का काम ये स्वयं करते हैं। समय–समय पर खेती के साथ–साथ मछली पालन से अतिरिक्त आय का स्रोत भी सामने लाया है। अब तक ये करीब 56 क्विंटल मछली बेच चुके हैं। इसमें इन्हें 15000/– हजार रुपए की मछली मिली है। मछली पालन में पूरक आहार, दवा आदि पर रुपए खर्च हुए हैं। इसे खर्च करने के बाद इन्हें 1,20,000/– रुपए का शुद्ध लाभ हुआ है। मैं मछली पालन के काम को बढ़ाना चाहता हूं। इस काम के लिए पूरा परिवार रामकृष्ण मिशन आश्रम और जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार का आभारी है:

क्र.सं.	विवरण	लागत	आय
1	Fish Farming	15000	1,20,000

गुड्डू बेदिया, केंदुआडीह

गुड्डू बेदिया, गांव– केंदुआडीह, प्रखंड– गोला, जिला– रामगढ़। प्रशिक्षण कार्यक्रम में शामिल होने से पहले वे अपने घर में पारंपरिक तरीके से पशुपालन

और मधुमक्खी पालन करते थे। वे अपने घर में पारंपरिक तरीके से पशुपालन और खेती करते थे। उन्हें अपनी आय बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम में शामिल होने के लिए प्रेरित किया गया। वे 2022 में बकरी पालन, जैविक खेती और गाय पालन के प्रशिक्षण कार्यक्रम में शामिल हुए। तदनुसार, प्रशिक्षण कार्यक्रम पूरा करने के बाद, उन्होंने एक नए तरीके से मधुमक्खी पालन की खेती शुरू की। मधुमक्खी से उनकी आय इस प्रकार है:

क्र.सं.	विवरण	लागत	आय	शुद्ध लाभ
1	मधुमक्खी पालन	1,30,000	3,60,000	2,30,000

पूरा परिवार खुशहाल जीवन जी रहा है और बचत बैंक खाता भी खुलवा लिया है। इस कार्य के लिए वह रामकृष्ण मिशन आश्रम और भारत सरकार के जनजातीय कार्य मंत्रालय के प्रति आभार व्यक्त करता हैं।

ग्राम्यांचल

विकसित कृषि अभियान का समापन

कृषि वैज्ञानिको के द्वारा रांची जिले के 135 गांवो में दिवासीय विकासित कृषि संकल्प अभियान चलाया गया। इस कार्यक्रम के तहत प्रत्येक गांव में खरीफ से पहले उगाये जाने वाले फसलों जैसे धान, अरहर, उरद, मृंगफली सरगुका, सोयाबीन सब्जी की खेती आदि की विस्तृत जानका दी गयी। बताया गया कि कौन–कौन सी प्रजाती लगायी है।

फसल की मुख्य बीमारियों को नियन्तण करने कटाइ के बाद वीजों के रखरखाव आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया। राँची में 135 गांवों में कार्यक्रम राँची कृषि विज्ञान केन्द्र के 6 वैज्ञानिक एवं आइ सी॰ ए॰ आर॰ के 4 संस्थानों जैसे– एन आइ एस ए, आइ आइ ए॰ बी, एन बी पी जी आर, हर्ष के एफ–एक वैज्ञानिक शामिल थे।

15 दिवसीय अभियान में कुल 135 गांव में करीव 25000 से अधिक किसानों से संवाद किया गया। जिसका उद्घाटन केन्द्रिय रक्षा मंत्री संजय सेठ थे 29 मई को किया गया।

मोटे अनाज के उत्पादन को बढ़ावा देने हेतु उन्नत प्रशिक्षण का आयोजन

भारतीय मिलेट अनुसंधान संस्थान हैदराबाद, आईसीएआर अटारी पटना एवं दिव्यायन कृषि विज्ञान केंद्र, आरके मिशन, मोराबादी के संयुक्त तत्वावधान में मोटे अनाज प्रमोशन परियोजना के अंतर्गत एफएलडी मिलेट कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में बताया गया कि कुल

250 एकड़ क्षेत्र में 500 किसानों को शामिल करते हुए विभिन्न प्रखंडों में फिंगर मिलेट की नवीन उन्नत किस्म बिरसा मडुवा–3 का प्रदर्शन किया जा रहा है।

अनगड़ा प्रखंड के प्रमुख दीपा उरांव के नेतृत्व में जराटोली गांव के 25 एकड़ भूमि का चयन किया गया है। इसके अंतर्गत किसानों को उन्नत कृषि हेतु नैनो यूरिया, नैनो डीएपी एवं सागरिका जैसे आवश्यक इनपुट्स का वितरण भी किया गया। जराटोली गांव में किसानों को मडुवा उत्पादन तकनीक पर प्रशिक्षण दिया गया। प्रशिक्षक वैज्ञानिक डॉ अजीत कुकर और डॉ मनोज कुमार सिंह ने नर्सरी प्रबंधन, एकीकृत पोषक रोग प्रबंध एवं ककीकृत पोषक तत्व प्रबंधन पर जानकारी दी।

ठाकुरगांव में ३० किसानों को बांटे मूंगफली के बीज

दिनांक 13 जून 2025 को ठाकुरगांव, प्रतिनिध। दिव्यायन कृषि विज्ञान केंद्र, मोरहाबादी के सौजन्य से बुढ़मू प्रखंड के बरौदी और लवागड़ा गांव में 30 किसानों के बीच निःशुल्क मूंगफली बीज एफ.एल. डी. कार्यक्रम में दिए गये।

श्री ओपी शर्मा, उपमुखिया शिवकुमार मुंडा ने मूंगफली बीज आईसीएआर अटारी के सहयोग से वितरण किया। श्री ओपी शर्मा ने किसानों को वैज्ञानिक विधि से मूंगफली की खेती करने का प्रशिक्षण दिया। उन्होंने कहा कि बुढ़मू और चान्हो प्रखंड में 13 हेक्टेयर में वैज्ञानिक तरीके से मूंगफली की खेती कराई जाएगी।

मौके पर छुन्नूलाल महातो, अखिलेश महतो, बलराम महतो, वसंत मुंडा और रामू मुंडा आदि किसान मौजूद थे।

रामकृष्ण मिशन आश्रम के माध्यम से तिरलाकोचा गाँव में प्रेरणादायक शैक्षणिक कार्यक्रम

दिनांक 3 जून 2025 को रामकृष्ण मिशन आश्रम के सौजन्य से तिरलाकोचा गाँव में एक शैक्षणिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य गाँव के बच्चों को शिक्षा के प्रति प्रेरित करना एवं आवश्यक शैक्षणिक संसाधन उपलब्ध कराना था।

इस अवसर पर रामकृष्ण मिशन आश्रम के सचिव स्वामी भवेशानन्द महाराज जी, स्वामी सुखमायाचन्द महाराज जी, स्वामी भक्तिशानन्द महाराज जी एवं आश्रम के समर्पित भक्त श्री रमेश झा, श्री रमानन्द झा और सारदा महिला समिति की सदस्य भी इस क्रार्यक्रम में. सक्रिय रूप से शामिल रहे।

कार्यक्रम के दौरान शिक्षा से जुड़ी कई महत्वपूर्ण बातों को बच्चों एवं परिजानों को बताया गया। **स्वामीजनों नें बच्चों को यह समझाया कि शिक्षा केवल नौकरी पाने का माध्यम नहीं, बल्कि यह चरित्र निर्माण, आत्मानिर्भरता और जीवन के सही मूल्य समझने का साधन है।** उन्होने यह भी कहा कि **नियमित पढ़ाई, समय का सही उपयोग, और संयमित जीवनशैली ही एक छात्र को सफलता की ओर ले जाती है। बच्चों को स्वामी विवेकानन्द के विचारो से भी परिचिय कराया गया और बताया गया कि कैसे एक मजबूत चरित्र और उद्देश्य पूर्ण जीवन से वे समाज में सकारात्मक बदलाव ला सकते हैं।**

कार्यक्रम में उपस्थित सभी महानुभावों ने बच्चों को उनके उज्जवल भविष्य के लिए शुभकामनाएँ दीं और उन्हें अपने लक्ष्य के प्रति निष्ठावान बने रहने के लिए प्रेरित किया।

कृषि विज्ञान संवाद

धान की यांत्रिक रोपाई तकनीक एवं फायदे

ओ॰ पी॰ शर्मा, कृषि विज्ञान केन्द्र (राँची)

झारखण्ड प्रदेश में वर्षा की अनिश्चितता के कारण पर धान की रोपाई समय पर नहीं हो पाती है। धान की खेती के लिए आवश्यक 1400–1800 मि॰मी॰ का लगभग 30% खेत में पलेवा और रोपाई में काम आता है। धान में अत्यधिक पलेवा (कादो) से मिट्टी में होने वाले भौतिक परिवर्तन धान की फसल के लिए अनुकुल हो सकते हैं लेकिन वे उपमृदा की रचना और मृदा संरचना की क्षति के कारण धान के बाद की फसलें उगाने में नुकसानदेह होते हैं। इसके अतिरिक्त सही समय पर धान की रोपाई मजदूरों पर भी निर्भर करती है जिससे खर्च में अत्यधिक वृद्दि होती है। इस सन्दर्भ में धान की रोपाई यांत्रिक विधि से संभव है जिसके फायदे इस प्रकार हैं:–

1. प्रति हेक्टेयर 20 मावन श्रम की बचत होती है। इस प्रकार धान की खेती में 6–7 हजार रूपये की बचत होती है।
2. 15–20 दिन की पौध की सही समय पर रोपाई संमव होती है।
3. प्रति वर्गमीटर 30–35 हिल्स का एक समान अंतराल पर रोपाई सुनिश्चित होती है।
4. जड़ो में कम क्षति के कारण बीमारी एवं रोग की भी संभावना कम होती है।
5. पारम्परिक विधि की तुलना में उत्पादन में वृद्दि (5–10%) की संभावना रहती है।
6. धान रोपाई में महिलाओं में ड्रुडजरी (थकावट) में कमी तनाव में कमी एवं स्वास्थ्य जोखिम में कमी।
7. नर्सरी तैयार करने एवं यांत्रिक रोपाई विधि से युवाओं में रोजगार तथा आय के स्त्रोत की सृजन होती है।
8. मिट्टी की स्वास्थ्य में सुधार होती है।

धान की यांत्रिक रोपाई के पूर्व अपेक्षाएँ:–

1. धान की खेत को पूर्ण तथा एकसार (लेवल) होना आवश्यक है।
2. रोपाई के पूर्व खरपतवार नियंत्रण हेतु रसायन का उपयोग अनिवार्य है। रोपाई करने से पूर्व 12 घंटे पूर्व खेत में सिंचाई की जाती है ताकि मिट्टी नर्म हो सके एवं रोपाई सुगमता से हो।
3. रोपाई के पूर्व कल्टीवेटर से खेत की जुताई करके पाटा चलाया जाता है।

धान की यंत्रिक रोपाई हेतु नर्सरी लगाने की विधि:–

आवश्यक सामाग्री:–

1. अच्छी गुणवता के बीज
2. नर्सरी बेड की साईज : 20 मी॰ X 1.2 मी॰ (एक प्रति एकड)
3. प्लास्टिक शीट: 1.2 मी॰ X 20 मी॰ लम्बाई
4. मृदा सफाई के लिए चलनी
5. मृदा एवं गोबर की खाद का मिश्रण (4:1)
6. जूट का बोरा एवं बीज भिंगाने हेतु जल पात्र
7. एंगल फ्रेम (½” साईज)

नर्सरी लगाने की विधि :— एक समतल जमीन पर 20 मी॰ लम्बा, 1.2 मी॰ चौड़ा एवं 10—15 से॰मी॰ ऊँचा नर्सरी तल तैयार किया जाता है। इस नर्सरी तल के उपर 100 माइक्रॉन की अपारदर्शी पोलिथीन शीट फैला दिया जाता है इस शीट के उपर 1 से 2 से॰मी॰ मोटी परत के रूप में मृदा एवं गोबर खाद (4:1) का मिश्रण फैला दिया जाता है एवं इसके उपर पूर्व अंकुरित धान बीज की बुआई 12 किलो ग्राम एकड़ की दर से कर दी जाती है। इसके उपर पुनः 0.5 से॰मी॰ मृदा की पतली परत चढ़ा दिया जाता है एवं वाटरिग कैन से इसके उपर पानी की सिंचाई की जाती है। नर्सरी की पोषण आवश्यकता हेतु 2 किलोग्राम (NPK 15:15:15) उर्वरक नर्सरी की विकास मे मदद करता है। इस नर्सरी को फिर रोपाई यंत्र मे फिट करने के लिए 60 से॰मी॰ X 20 से॰मी॰ साईज के केक बनाकर धान की रोपाई हेतु रोपाई यंत्र के रखा जाता है। इस यंत्र के द्वारा 2 से 2.5 घंटे में एक एकड़ क्षेत्र के रोपाई होती।

इस मशीन की कार्यक्षमता 4 एकड़/दिन होती है। इस मशीन की कीमत लगभग 2 लाख रूपया है।

ब्रूसिलोसिसः मवेशियों और मनुष्यो में होनेवाली एक खतरनाक बिमारी

डा. भरत महतो, डा. विशाखा सिंह, कृषि विज्ञान केन्द्र रांची

ब्रूसीलोसिस एक जीवाणु जनित बीमारी है जो पशुओं से मनुष्य में भी फैलता है. यह पहली बार कैरिमेन युद्ध के दौरान वर्णन किया गया था और डॉ. डेविड बूस ने 1887 में पहली बार प्रेरक जीवाणु की पहचान की थी। 1887 में, डॉ. बर्नहार्ड बैंग ने इस जीवाणु का नाम ब्रूसेला एबोर्टस रखा था। कई जीवाणु प्रजातियां जैसे कि *बी. एबोर्टस, बी. मेलिटॅसिस, बी. सूइस, बी. निओटोमे, बी. ओविस, बी. कैनिसजीनस* ब्र2सेला के तहत विभिन्न जानवरों की प्रजातियों को संक्रमित करती हैं, आमतौर पर ब्रूसीलोसिस कहा जाता है। ब्रुसेला प्रजातियां ग्राम—नेगेटिव, कोकोबैसिली या शॉर्ट रॉड्स, एरोबिक, आंशिक रूप से एसिड फास्ट और वैकल्पिक इंट्रासेल्युलर बैक्टीरिया हैं। हालांकि, ब्रुसेला की अन्य प्रजातियां भी मनुष्यों को संक्रमित कर सकती हैं। इस बीमारी को आमतौर पर मनुष्यों में 'भूमध्यसागरीय बुखार' या 'माल्टा बुखार' और 'लहरदार बुखार' कहा जाता है।

ब्रुसेलोसिस का वैश्विक और राष्ट्रीय प्रसार

यह बीमारी अफ्रीका, मैक्सिको, पेरु, भारत, चीन, मध्य पूर्व और भूमध्यसागरीय क्षेत्रों सहित कई देशों में प्रचलित है। मध्य और दक्षिण—पश्चिम एशिया में इस बीमारी के प्रसार में बृद्धि बड़ी चिंता का विषय है। माना जाता है कि कुछ देश ब्रुसेलोसिस से मुक्त हैं, जिनमें ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, जापान, न्यूजीलैंड और उत्तरी और पश्चिमी यूरोप के कई अन्य देश शामिल हैं। भारत में, रोग प्रकृति में स्थानिक है।

भारत में, उचित निगरानी की कमी के कारण ह्यूमन ब्रुसेलोसिस की सही व्यापकता का ठीक—ठीक पता नहीं है, लेकिन पशु उत्पादों से जुड़े लोगों में यह रोग अत्यधिक प्रचलित है। रिपोर्ट की गई प्रसार दर 0.8 और 26% के बीच भिन्न होती है। हालांकि,

उचित निगरानी और निदान की कमी के कारण यह हिमशैल के केवल शिखर को दर्शाता है।

अतिसंवेदनशील जानवर

मवेशियों में ब्रुसेलोसिस के लिए ब्रूसिला के विभिन्न बायोवार्स जिम्मेदार हैं। हालांकि, अन्य प्रजातियां जैसे *बी. मेलिटेंसिस* और *बी. सूइ* भी कभी–कभी मवेशियों को संक्रमित कर सकती हैं।

भेड़ और बकरियों में ब्रुसेलोसिस के लिए *बी मेलिटॅसिस* के तीन बायोवार्स जिम्मेदार हैं। भेड़ और बकरियां बिरले ही *बी. एबॉर्टस* और *बी. सूइसबायोवार्स* 1,2 और 3 से संक्रमित होते हैं, जिससे सूअरों में ब्रूसीलोसिस होता है। लेकिन *बी. एबोर्टस* और *बी. मेलिटॅसिस* के कारण सूअरों में छिटपुट संक्रमण की जानकारी है। इसके अलावा, ब्रुसेला की अधिकांश प्रजातियां अन्य जुगाली करने वाले जानवरों, घोड़ों, ऊंटों, कुत्तों, जंगली जानवरों और समुद्री स्तनधारियों को संक्रमित करने में सक्षम हैं।

संचरण और संक्रमण का प्रसार

जानवरः गर्भस्थ भ्रूण और प्लेसेंटा युक्त ब्रुसेला जीव के साथ जानवर से जानवर का संपर्क अतिसंवेदनशील जानवरों के संचरण का एक प्रमुख मार्ग है। दूषित चारागाह, चारा और पानी के माध्यम से जीवों के अंतर्ग्रहण से पशु भी संक्रमित हो जाते हैं। संक्रमित जानवर कोलोस्ट्रम और दूध में ब्रुसेला जीवों का उत्सर्जन करते हैं, जो युवा जानवरों के लिए स्रोत संक्रमण के रूप में कार्य करते हैं। इसके अलावा, संक्रमित दूध देने वाले कपों से त्वचा संदूषण, साँस लेना, नेत्रश्लेष्मला टीकाकरण और उदर टीकाकरण रोग संचरण के अन्य मार्ग हैं। यौन संचरण के संबंध में, कृत्रिम गर्भाधान एक प्रमुख भूमिका निभाता है यदि एक संक्रमित बैल से वीर्य का उपयोग मवेशियों में किया जाता है। सूकरों और कुत्तों में, हालांकि, बीमारी फैलने में यौन संचरण प्रमुख मार्ग है।

मानवः मनुष्यों ने संक्रमण संक्रमित जानवरों के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संपर्क से फैलता है। संक्रमित जानवर गर्भस्थ भ्रूण, गर्भनाल, दूध, गर्भाशय/योनि स्राव और वीर्य में ब्रुसेला जीवों का उत्सर्जन करते हैं, जो मनुष्यों के लिए संक्रमण के स्रोत के रूप में कार्य करते हैं। संक्रमित पशुओं के कच्चे दूध और दुग्ध उत्पादों का सेवन भी रोग संचरण का एक प्रमुख मार्ग है।

ब्रुसेला के लक्षण

मवेशीः गर्भावस्था के 5 से 9 महीने तक गर्भपात. प्लेसेंटाइटिस, प्लेसेंटा का प्रतिधारण, ऑर्कीइटिस, एपिडीडिमाइटिस, दोनों लिंगों में बांझपन, गठिया, दूध में जीवों के उत्सर्जन और मवेशियों में गर्भाशय स्राव की जानकारी दी गई है। थन ब्रुसेला जीवों से स्थायी रूप से संक्रमित रहेंगे।

भेड़ और बकरीः गर्भावस्था के अंतिम दो महीनों में गर्भपात की जानकारी दी जाती है और यह छिटपुट प्रकृति का होता है। अन्य लक्षण प्लेसेंटा, मास्टिटिस और दूध उत्पादन में कमी है।

कभी–कभी गर्भपात के बिना रोग स्पर्शोन्मुख होता है लेकिन पशु कमजोर संतानों को जन्म देता है और कम वजन का होता है। एपिडीडिमाइटिस, ऑर्काइटिस और पुरुषों में कम प्रजनन क्षमता (भेड़ों में आम) भी रिपोर्ट की गई है।

कुत्ताः रोग प्रकृति में जीर्ण करने के लिए तीव्र है। गर्भपात (45–59 दिन) के बीच में गर्भपात और फिर 1–6 सप्ताह तक बिना किसी दुर्गंध के भूरे से पीले योनि स्राव, मृत जन्म, कमजोर पिल्ले, बांझपन, डिस्कोस्पोंडिलाइटिस, न्यूरोलॉजिकल डिसफंक्शन, लंगड़ापन और मांसपेशियों की कमजोरी नैदानिक अभिव्यक्तियाँ हैं। कुत्तों में लक्षण अन्य नर पशु प्रजातियों में ब्रूसीलोसिस के समान होते हैं।

सूअरः 50 से 116 दिनों के बीच गर्भपात, बांझपन, गठिया, स्पॉन्डिलाइटिस, लंगड़ापन और पश्च पक्षाघात कुछ नैदानिक अभिव्यक्तियाँ हैं जो सूअरों द्वारा प्रदर्शित किए जाते हैं। पुरुष और महिला दोनों संक्रमण से ठीक हो सकते हैं लेकिन जीवन भर वाहक बने रहते हैं। घोड़े के गर्दन या पीठ

की सूजन ब्रूसीलोसिस का एक संकेत है और इसे फिस्टुलस के रूप में जाना जाता है। गर्भवती घोड़ी में गर्भपात या कमजोर बछड़े का जन्म अन्य लक्षण हैं।

मनुष्यों में ब्रूसीलोसिस के कारण होनेवाली जटिलतायें

हड्डी और जोड़ों का रोग: 40% तक मानव मामलों में हड्डी और जोड़ शामिल हो सकते हैं। अन्य जटिलताओं में बर्साइटिस, सैक्रोइलाइटिस, ऑस्टियोमाइलाइटिस, परिधीय गठिया, स्पॉन्डिलाइटिस और टेनोसिनोवाइटिस शामिल हैं। वर्टेब्रल ऑस्टियोमाइलाइटिस विशेष रूप से काठ कशेरुकाओं को शामिल करना वक्ष और रीढ़ की हड्डी वाले कशेरुकाओं की तुलना में अधिक आम है।

यह टाइफाइड बुखार जैसा दिखता है और रोगी मतली, पेट में दर्द और बेचैनी दिखा सकते हैं।

गर्भावस्था और स्तनपान: गर्भवती महिला में संक्रमण के कारण प्रारंभिक तिमाही में गर्भपात हो सकता है या भ्रूण में संक्रमण का अंतर्गर्भाशयी संचरण हो सकता है। स्तनपान के माध्यम से संक्रमण संचरण शायद ही कभी देखा जाता है।

कार्डियोवास्कुलर: ब्रुसेला संक्रमण संक्रामक अन्तर्हद्रशोथ का कारण बनता है।

प्रयोगशाला निदान के लिए एकत्र किए जाने वाले नमूने

जानवर: बैक्टीरियल आइसोलेशन के लिए, गर्भस्थ भ्रूण पेट की सामग्री, योनि स्राव, रक्त, दूध (प्रत्येक थन से 10–20 मिलीलीटर), हाइग्रोमा तरल पदार्थ और लिम्फ नोड्स के नमूने संदिग्ध जानवरों से एकत्र किए जाते हैं। सीरोलॉजिकल डायग्नोसिस के लिए, सीरम और दूध को प्राथमिकता दी जाती है और कोल्ड चेन के तहत डायग्नोस्टिक प्रयोगशालाओं में भेज दिया जाता है। ब्रूसेला अलगाव में सुधार के लिए कोई विशिष्ट परिवहन माध्यम उपलब्ध नहीं है। इसलिए, नमूनों को कोल्ड चेन के तहत नैदानिक प्रयोगशालाओं में भेजा जाना चाहिए। यदि परिवहन में 12 घंटे से अधिक समय लगता है. तो बैक्टीरिया अलगाव के लिए नमूनों को जमे हुए स्थिति में भेज दिया जाना चाहिए।

इंसान: बैक्टीरिया के अलगाव और प्रतिरक्षा निदान के लिए सीरम के नमूनों के लिए रक्त, घाव की सूजन, अस्थि मज्जा एस्पिरेट्स, मस्तिष्कमेरु द्रव और मवाद के नमूने को प्राथमिकता दी जाती है।

ब्रूसेला संक्रमण का निदान

किसान, पशु चिकित्सक, टीका लगाने वाले, पैरावेट और बूचड़खाने के कार्यकर्ता संक्रमण के प्रति संवेदनशील होते हैं क्योंकि वे संक्रमित जानवरों और गर्भस्थ भ्रूण या गर्भनाल को संभालते हैं।

नमूने राज्य पशुपालन विभागों के क्षेत्रीय रोग निदान प्रयोगशालाओं (आरडीडीएल) को भेजे जाने चाहिए। इसके अलावा, कई पशु चिकित्सा महाविद्यालय/विश्वविद्यालय निदान प्रदान करते हैं। ब्रूसेलोसिस के लिए सेवाएं आईसीएआर संस्थान जैसे कि भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, बरेली यूपी और राष्ट्रीय पशु चिकित्सा महामारी विज्ञान और रोग सूचना विज्ञान संस्थान भी नैदानिक सेवाएं प्रदान करते हैं। मानव के नमूने मेडिकल कॉलेज, एम्स दिल्ली और पीजीआईएमईआर चंडीगढ़ भेजे जाएं।

मानव ब्रुसेलोसिस के सभी रूपों को एक चिकित्सक की देखरेख में पर्याप्त समय के लिए प्रभावी एंटीबायोटिक दवाओं के साथ इलाज किया जाना चाहिए। डब्ल्यूएचओ के अनुसार, 8 वर्ष से कम आयु के वयस्कों और बच्चों के लिए (जटिल मामलों में) 6 सप्ताह के लिए दिन में दो बार डॉक्सीसाइक्लिन 100 मिलीग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन 1 ग्राम प्रतिदिन 2 से 3 सप्ताह के लिए इलाज किया जा सकता है। अन्य विकल्प डॉक्सीसाइक्लिन 100 मिलीग्राम 6 सप्ताह के लिए दिन में दो बार। रिफैम्पिसिन 600–900 मिलीग्राम प्रतिदिन 6 सप्ताह के लिए है।

ब्रुसेला एबोर्टस स्ट्रेन (एस 19), ब्रुसेला एबोर्टस स्ट्रेन आरबी 51, ब्रुसेला मेलिटेंसिस रेव. 1 (रेव. 1) और ब्रुसेला सुईस स्ट्रेन (एस2) जैसे टीके उपलब्ध हैं। इनमें से 5–19 टिको का कई देशों में व्यापक रूप से उपयोग किया गया है। मवेशियों में ब्रुसेलोसिस को नियंत्रित करने के लिए सीरोलॉजिकल रूप से नकारात्मक मादा बछड़ों (3 से 6 महीने की उम्र) को चमड़े के नीचे के मार्ग से टीका लगाया जाना चाहिए। वही टीका वयस्क जानवरों और गर्भवती जानवरों के टीकाकरण के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। देश में कुते और सूअर प्रजातियों के खिलाफ कोई टीका उपलब्ध नहीं है।

झारखण्ड में धान की खेती में आत्मनिर्भरता

डॉ॰ मनोज कुमार सिंह, एस.एम.एस. एग्रोनामी, दिव्यायन के.वी.के. राँची

झारखण्ड प्रदेश मे धान की खेती 17.5 लाख हे॰ क्षेत्र में की जाती है। जिसमे प्रमुख जीले राँची, लोहरदगा, पलामू, हजारीवाग, पूर्वी सिंह भूमि, पश्चिमी सिंह भूमि, दूमका गोड्डा तथा साहेबगंज है। यहाँ पर धान को दोन 1, दोन 2, दोन 3, तथा टांड 1 मे इसकी खेती की जाती है। यहाँ पर 1000 से 1400 मि॰मी॰ वर्षा होती होती है। यहाँ की मृदा लेटराइट दोमट मे इसकी खेती की जाती है। धान झारखण्ड की प्रमुख फसल है।

खेत का चयनः– खेत में पानी रूकने की क्षमता होनी चाहिए। खेती के चारो ओर मेढ़ बाधना चाहिए। जिससे पानी को रोका जा सके।

खेत की मृदा की तैयारीः– पहली जूताई वर्षा के बाद हल या ट्रैक्टर से करनी चाहिए। दूसरी व तीसरी जूताई के बाद पाटा लगा कर मिट्टी को भुरभुरी करते रहना चाहिए। खेत को समतल करे जिससे पानी को रोका जा सके।

जल का प्रबंधनः– खेत में पानी रोकने के लिये मजबूत मेड़ बनाना चाहिए। पानी निकासी की उचित व्यवस्था करे, ताकि ज्यादा पानी से कोई नुकसान ना हो।

जैविक खाद या उर्वरक का उपयोगः– यदि जैविक विधि से करना चाहते है तो 160 से 200 कुन्तल गोवर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग करे साथ में बीज संजीवनी, सस्थ गव्य, पंचगव्य, कुनापा जला का उपयोग करे। जब जैविक विधी से धान रोप रहे हो तो।

यदि प्रकिृतिक खेती के माध्यम से करना चाहते है तो हरी खाद डैचां या सनई को मई के अन्त में 20 से 40 किलो प्रति हेक्टेअर की दर से करे तथा वीजा अमृत, जीबा अमृत प्रत्येक 21 दिन पर छिड़काव फसल पर करे, खेत की तैयारी के समय घन जीवाअंमृत 50 कुन्तल प्रति हेक्टेअर की दर से शुरूआत समय करे।

यदि उर्वरक का उपयोग करना चाहते है तो

(अ) ऊँची जमीन के लिये 40 : 20 : 20 किलो ग्राम एन॰पी॰के॰ प्रति हेक्टेयर की दर से करे।

(ब) मध्यम जमीन (दोन 3 व दोन 2) के लिये 30 : 40 : 20 किलो एन॰पी॰के॰ हे॰ की दर से करे।

(स) नीची जमीन के लिये 120 : 60 : 40 : किलो एन॰पी॰के॰ हे॰ की दर से उपयोग करे।

(द) संकट धान (दोन 2 व दोन 1) के लिये 150 : 60 : 90 : किलो एन॰पी॰के॰ हे॰ की दर से उपयोग करें।

नेत्रजन का व्यवहारः– अगात प्रभेद (सीधी बुआई) के लिये बुआई के समय नतजन 50% फास्फोरस 100%, तथा पोटाश 100% की दर से उपयोग करे। शेष नेत्रजन बुआई के 21 दिन बाद खरपतवार

निकलने के बाद 25% तथा अन्तिम नत्रजन का उपयोग बुआई के 45 से 50 दिन बाद करना चाहिए।

अगात प्रभेद रोपनी:— ऊँची जमीन तथा मध्यम जमीन के लिये नतजन रोपनी के समय 50% रोपनी के 2 से 3 सप्ताह बाद 25% तथा रोपनी के 6 सप्ताह बाद 25% नतजन का प्रयोग रोपनी के समय 30% रोपनी के 7.8 सप्ताह बाद करनी चाहिए।

यदि खेत में पानी का अधिक जमाव हो तो पानी थोडा निकाल कर खाद को देना चाहिए। फास्फोरस व पोटाश को बुआई या रोपाई धान में :— धान की रोपाई के समय नतजन 50% फास्फोरस 100% पोटाश 75% की दर से खेत के कादो बनाते समय दे देना चाहिए। रोपाई के 3 से 4 सप्ताह बाद 25% नतजन तथा रोपाई के 7 से 8 सप्ताह बाद दूध भरते समय नतजन का 25% तथा शेष पोटाश का 25% उपनिवेश करना चाहिए। इस समय पोटाश देने से धान खेत ये नही गिरेगा।

धान के प्रमुख प्रभेद :—

(क) **मध्यम जमीन (टांड 1 व दोन 3)**:— विरसा विकास धान 110/109/111ए, अंजली व वन्दना

(ख) **मध्यम जमीन (दोन 3 से दोन 2)**: सहभागी, सीआर 320, आईआर 64 ड्राट ललाट, अभिषेक, विरसा विकास धान 203ए विरसा मती, विरसा विकास धान सुग—धान

(ग) **नीची जमीन (दोन 1) के लिये**:— स्वर्णा मंसुरी (एम टीयू 7029), साम्या मंसुरी, BPT 5204, राजेन्द्र मंसुरी, राजेन्द्र कस्तुरी तथा उन्नत साम्था मंसुरी

(घ) **सुगन्धीत धान**:— सुगधां, कामिनी, BR-9 विरसा मती, राजेन्द्र सुगन्धा, राजेन्द्र कस्तुरी, भूटकू तुलसी मंजरी, तुलसी मूकूल, काला नमक, काला जोए, गोविन्द थोग, पूसा वासमती 1509 पूसा वासमती 1718, पूसा वासमती 1121 अदि प्रभेद लगाया जा सकता है।

(ड़) **संकर धान**:— एराइज 6444 गोल्ड, एराइज तेज, के॰आर॰ 2 अजय (डी॰आर॰आर॰ एच.2) यू.एस. 2ए पी॰, एच वी॰ 71 तथा डी॰आर॰आर॰ एच.3

बीज स्थली:— एक सौ वर्गमीटर क्षेत्रफल की वीज स्थली में क्यारियो निम्नलिखित मात्रा में खाद डाले।

1 किलो नतजन, 1 किलो फास्फोरस 1 किलो पोटाश तथा बीज उपचार वीजाअमृत से करे। बीज गीराने के 15 से 20 दिन बाद 1 किलो नेतजन से विचड़ों का उपनिवेश करे। बीज को 24 घण्टे तक पानी में भिगां कर रखे।

रोपाई:— धान को 20X25 से॰मी॰ तथा श्री विधि 25X25 से॰मी॰ या जौविक व प्राकृ खेती में थी 25X25 से॰मी॰ की दूरी पर रोपना चहिए।

खर पतवार नियतज:— रोपाई के 21 दिन वाद— धान के खरपतकर को निकाल देना चाहिए। लाइन से लगाने पर कोनों वीड़ट 15 से 21 दिन पर पहली बार उपयोग करे। दूसरी बार 30-35 दिन पर पुनः कोनो वीडर, ऊशा वीडर या जापानी वीडर का उपयोग करे। जिससे धान की जड़े हारजेन्टल की जगह वर्टीकल रूप मे जाने से दाने अधिक आयेंगे तथा बाली लम्बी होगी, ज्यादा टिलर अधिक निकलेगा।

धारणा से अनुकूलन तक जलवायु परिवर्तन की चुनौती

कौस्तब मजूमदार
सहायक प्रोफेसर (ग्रामीण विकास), रामकृष्ण मिशन विवेकानंद शैक्षिक एवं अनुसंधान संस्थान
मोराबादी, रांची-834008, झारखंड, भारत
एवं फेलो, हैरियट टबमैन संस्थान, यॉर्क विश्वविद्यालय, कनाडा

प्रस्तावना

जलवायु परिवर्तन आज हमारे समय का सबसे गंभीर वैश्विक संकट बन चुका है। पिछले कुछ दशकों में पृथ्वी का औसत तापमान लगातार बढ़ा है, ग्लेशियरों का पिघलना तेज हुआ है, और समुद्र तल में वृद्धि के कारण तटीय क्षेत्र जलमग्न होने का खतरा झेल रहे हैं। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप अधिक बार और अधिक तीव्र प्राकृतिक आपदाएँ– जैसे सूखा, बाढ़, उष्णकटिबंधीय चक्रवात–हमारी जीवन–यात्रा को कठिन बना रहे हैं। इस चुनौती से निपटने के लिए केवल तकनीकी उपाय पर्याप्त नहीं हैं; सामाजिक धारणा (Perception) और अनुकूलन क्षमता (Adaptation Capacity) में मौजूद अंतर (Adaptation Gaps) को भी समझना और पाटना उतना ही आवश्यक है।

वैज्ञानिक समुदाय ने दशकों पहले ही इस संकट की चेतावनी दे दी थी, लेकिन आम जनमानस में इसकी गंभीरता का आभास अभी भी अनियमित और अधूरा है। कुछ क्षेत्रों में लोग इसे अधिक महत्व नहीं देते, जबकि कुछ अन्य में अतिरंजित या विकृत जानकारी के कारण गलत धारणाएँ बन गई हैं। धारणा का यह वैविध्य अनुकूलन प्रयासों को प्रभावित करता हैः जहाँ वास्तविकता को स्वीकार कर सामूहिक कार्रवाई हो सकती है, वहीं मिथक और अज्ञानता लोगों को निष्क्रिय बना देते हैं।

दूसरी ओर, सरकारें और अंतर्राष्ट्रीय संगठन अनुकूलन रणनीतियाँ बना रहे हैं, जैसे बाढ़ नियंत्रण परियोजनाएँ, सूखा–प्रतिरोधी फसलें, हरित ऊर्जा संक्रमणकृलेकिन कई बार स्थानीय समुदायों की भागीदारी या उनकी जरूरतों का सही आकलन नहीं हो पाता। इसी वजह से योजनाएँ कागजों तक सीमित रह जाती हैं या अपेक्षित लाभ नहीं पहुँचा पातीं। इन दोनों पहलुओं धारणा और अनुकूलन अंतर को समझकर ही हम कारगर समाधान की दिशा में कदम बढ़ा सकते हैं।

इस लेख में हम चार प्रमुख हिस्सों में बात करेंगे। सबसे पहले, हम जलवायु परिवर्तन की धारणा का विश्लेषण करेंगे, जानेंगे कि लोग इसे कैसे देखते हैं और धारणा में विविधता के कारण क्या हैं। इसके बाद हम अनुकूलन अंतर को विस्तार से समझेंगे, किन–किन वजहों से अनुकूलन प्रयासों में कमी रहती है और उससे समाज को क्या नुकसान उठाना पड़ता है। तीसरे हिस्से में हम मुख्य चुनौतियों और बाधाओं पर चर्चा करेंगे, जिनका सामना विभिन्न स्तरों व्यक्तिगत, सामाजिक, प्रशासनिक को करना पड़ता है। अंत में, हम समाधान और सिफारिशों पर प्रकाश डालेंगे, ताकि धारणा और अनुकूलन अंतर दोनों को पाटकर सतत और समावेशी विकास की दिशा में बढ़ा जा सके।

जलवायु परिवर्तन की धारणा

जलवायु परिवर्तन की धारणा (Perception) का अर्थ है कि अलग अलग लोग और समुदाय इस वैश्विक समस्या को कैसे समझते, महसूस करते और मूल्यांकन करते हैं। जहाँ वैज्ञानिक साक्ष्य यह स्पष्ट करते हैं कि तापमान में वृद्धि, समुद्र तल का बढ़ना और चरम मौसम की घटनाएँ मानवजनित गतिविधियों का परिणाम हैं, वहीं आम जनमानस में इस समस्या की गंभीरता और मानव योगदान को लेकर मतभेद देखे जाते हैं। धारणा का यह वैविध्य कई कारणों से उत्पन्न होता है, जिनमें व्यक्तिगत अनुभव,

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, शिक्षा स्तर और मीडिया का प्रभाव प्रमुख हैं।

जोखिम का मापन (Risk Perception)

मनोवैज्ञानिक शोध बताते हैं कि लोग उन खतरों को अधिक गंभीर मानते हैं, जिनका अनुभव उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से किया हो। उदाहरण के लिए, बाढ़ या सूखे जैसी आपदाओं का सामना कर चुके लोग जलवायु परिवर्तन को अधिक वास्तविक मानते हैं, जबकि जिनके जीवन में इस तरह की घटनाएँ कम हुई हों, वे इसे दूर का प्रश्न समझ सकते हैं। इसके अलावा, समय और स्थान की दूरी का भी महत्व है, यदि कोई व्यक्ति भविष्य में या दूसरे देश में होने वाले प्रभावों को सीधे नहीं देखता, तो उसकी चिंता और प्रतिबद्धता कम हो सकती है।

सांस्कृतिक और सामाजिक कारक

भारत जैसे विविध समाज में स्थानीय परंपराएँ, धार्मिक मान्यताएँ और पारिवारिक दृष्टिकोण धारणा को प्रभावित करते हैं। कुछ समुदाय प्राकृतिक आपदाओं को ईश्वरीय इच्छा मानते हैं, न कि पर्यावरणीय असंतुलन का परिणाम। ऐसे में वैज्ञानिक व्याख्याओं को स्वीकारना मुश्किल हो जाता है। वहीं, पारंपरिक ज्ञान– जैसे मानसून पर निर्भर कृषि समुदायों का मौसम चक्रों का अनुभवकृभी जलवायु परिवर्तन के नए पैटर्न को समझने में मदद कर सकता है, यदि इसे आधुनिक विज्ञान के साथ जोड़ा जाए।

शिक्षा और सूचना स्रोत

शैक्षिक स्तर जितना उच्च होता है, जागरूकता भी उतनी ही गहरी होती है। हालांकि, यहाँ मीडिया का दोहरा प्रभाव देखा जाता है। एक ओर सटीक रिपोर्टिंग और वृत्तचित्र जनमानस को जागरूक बनाते हैं, वहीं दूसरी ओर अतिशयोक्ति या अपुष्ट खबरें भ्रम फैलाती हैं। सोशल मीडिया पर फैलने वाले मिथक जैसे– "जलवायु परिवर्तन कोई नई समस्या नहीं" या "भारत का योगदान नगण्य है"। कई बार वैज्ञानिक तथ्यों से अधिक तेजी से प्रसारित होते हैं। इस स्थिति में, पर्यावरणीय शिक्षा को स्थानीय भाषा और संदर्भों में प्रस्तुत करना आवश्यक हो जाता है।

धारणा और नीति-निर्माण

यदि जनता जलवायु परिवर्तन की गंभीरता को समझती है, तो नीतिगत दबाव बढ़ता है और सरकारें अधिक महत्व देती हैं। उदाहरण के तौर पर, जब ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों ने सूखे को गंभीर समस्या के रूप में देखा, तो स्थानीय प्रशासन ने जलसंधारण और सूखा–प्रतिरोधी फसलों के लिए विशेष योजनाएँ शुरू कीं। वहीं, शहरी क्षेत्रों में जब बाढ़ की बढ़ती घटनाओं ने यातायात और जनजीवन प्रभावित किया, तो नगर निगम ने बाढ़–रोधी नालों और हरित क्षेत्रों के विकास पर ध्यान दिया।

सर्वेक्षणों का संकेत

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किए गए सर्वेक्षण भी धारण ा के वैविध्य को दर्शाते हैं। विकसित देशों में नागरिकों का एक बड़ा हिस्सा जलवायु परिवर्तन को मानव–निर्मित मानता है, जबकि विकासशील देशों में यह आंकड़ा थोड़ा कम होता है। भारत में भी विभिन्न राज्यों के बीच जागरूकता में अंतर देखा गया है। जहाँ तटीय राज्य जैसे केरल में लोग अधिक सचेत हैं, वहीं कुछ अंदरूनी क्षेत्रों में जागरूकता कम है।

धारणा में विविधता को समझकर ही हम लक्षित जागरूकता अभियान चला सकते हैं, जो स्थानीय अनुभवों, सांस्कृतिक मान्यताओं और भाषा को ध्यान में रखकर लोगों तक सटीक संदेश पहुँचाए।

अनुकूलन अंतर (Adaptation Gaps)

अनुकूलन अंतर (Adaptation Gaps) का तात्पर्य है कि जितनी जरूरत है, उससे कहीं कम तैयारी, निवेश और कार्रवाई हो रही है। जलवायु परिवर्तन के जोखिमों को कम करने या उससे निपटने के लिए विभिन्न तकनीकी, सामाजिक और नीतिगत उपायों की आवश्यकता होती है, लेकिन वास्तविक

दुनिया में ये उपाय अपेक्षित पैमाने पर नहीं लागू हो पाते। इस अंतर का सामना व्यक्तिगत स्तर से लेकर वैश्विक मंच तक होता है, जिससे समाज और पर्यावरण को भारी क्षति उठानी पड़ती है।

आर्थिक बाधाएँ

विकासशील देशों में बजट की कमी, कर्ज का बढ़ता बोझ और प्राथमिक सेवाओं में निवेश की प्राथमिकता के कारण अनुकूलन परियोजनाओं के लिए पर्याप्त संसाधन उपलब्ध नहीं हो पाते। उदाहरण के लिए, भारत में कई राज्यों ने बाढ़–नियंत्रण योजनाएँ तो बनाई, लेकिन निधि की कमी और धीमी प्रशासनिक प्रक्रियाओं के कारण उनकी समय पर पूर्णता नहीं हो पाई। इससे प्रभावित क्षेत्र में जनजीवन पर दबाव बढ़ गया और आर्थिक नुकसान हुआ।

तकनीकी क्षमता की कमी

अनुकूलन के लिए सूखा–प्रतिरोधी फसलों का विकास, तटीय बाड़ों का निर्माण, बाढ़–रोधी नालों का डिजाइन जैसे जटिल कार्य होते हैं, जिनके लिए विशेषज्ञों और उन्नत तकनीकों की आवश्यकता होती है। कई ग्रामीण या दूरदराज के इलाकों में ऐसी विशेषज्ञता उपलब्ध नहीं होती, जिससे स्थानीय समुदायों को बाहरी सहायता पर निर्भर रहना पड़ता है। इस निर्भरता के चलते समय और लागत बढ़ जाती है, और स्थानीय ज्ञान का सदुपयोग भी नहीं हो पाता।

संस्थागत और नीतिगत बाधाएँ

विभिन्न मंत्रालयों, विभागों और एजेंसियों के बीच समन्वय का अभाव होता है। कभी–कभी जल संसाधन विभाग अलग नीति बनाता है, तो कृषि विभाग की प्राथमिकता अलग होती है, जिससे एकीकृत दृष्टिकोण नहीं बन पाता। स्थानीय शासन संस्थाओं की क्षमता और जवाबदेही की कमी के कारण योजनाओं का क्रियान्वयन कमजोर पड़ जाता है। पारदर्शिता और निगरानी तंत्र की कमी भी इस अंतर को गहरा करती है।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक

लैंगिक असमानता, जातिगत भेदभाव, और संपत्ति अधिकारों का असंतुलन अनुकूलन तकनीकों तक पहुँच को सीमित कर देता है। कुछ समुदायों में महिलाओं को निर्णय प्रक्रिया से बाहर रखा जाता है, जबकि वे पारंपरिक रूप से जल प्रबंधन और कृषि कार्यों में सक्रिय रहती हैं। भूमिहीन या सीमांत किसान सरकारी योजनाओं का लाभ नहीं उठा पाते, क्योंकि उन्हें जमीन के अधिकार या जानकारी नहीं मिलती।

परिणामस्वरूप जोखिम

अनुकूलन अंतर के परिणामस्वरूप समाज पर कई प्रकार के जोखिम बढ़ जाते हैं, खाद्य असुरक्षा, स्वास्थ्य समस्याएँ, विस्थापन और सामाजिक अशांति। समुद्र तल बढ़ने से तटीय समुदायों का विस्थापन, सूखे प्रभावित क्षेत्रों से शहरी पलायन, और बाढ़ के बार–बार होने से जीवनयापन पर बढ़ता दबाव इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

वित्तीय एवं पारंपरिक समाधान

हरित जलवायु कोष जैसे अंतरराष्ट्रीय वित्तीय तंत्र उपलब्ध हैं, लेकिन उनकी जटिल प्रक्रियाओं के कारण स्थानीय परियोजनाओं तक लाभ सीमित रहता है। माइक्रो–इंश्योरेंस, समुदाय आधारित बचत समूह और पारंपरिक ज्ञान का समावेश अनुकूलन अंतर को पाटने में सहायक हो सकता है। आदिवासी और स्थानीय समुदायों के अनुभवों को आधिकारिक रणनीतियों में शामिल करके अधिक प्रभावी और टिकाऊ परिणाम हासिल किए जा सकते हैं।

आगे का रास्ताः समाधान और सिफारिशें

धारणा और अनुकूलन अंतर को पाटने के लिए हमें बहु–आयामी और समन्वित प्रयास करने होंगे। निम्नलिखित उपाय कारगर सिद्ध हो सकते हैं–

1. लक्षित जागरूकता अभियान

- स्थानीय भाषा व संदर्भ में जानकारी साझा करें।

- पंचायत स्तर पर "जलवायु चौपाल" आयोजित कर वैज्ञानिकों, किसानों व स्थानीय नेताओं में संवाद बढ़ाएँ।
- रेडियो, नाट्य मंचन, सोशल मीडिया और सामुदायिक बैठकों का संयोजन प्रभावी रहेगा।

2. शिक्षा एवं क्षमता निर्माण

- स्कूलों व कॉलेजों में जलवायु विज्ञान को पाठ्यक्रम में शामिल करें।
- ग्रामीण क्षेत्रों में "अनुकूलन प्रशिक्षण शिविर" आयोजित कर स्थानीय स्वयंसेवकों को तकनीकी कौशल दें।
- युवा पीढ़ी को जागरूक कर सामुदायिक संवाद के लिए प्रेरित करें।

3. समावेशी नीतिगत ढाँचा

- लिंग, आय वर्ग, जाति व स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर योजनाएँ बनाएं।
- महिला, आदिवासी व सीमांत वर्गों को निर्णय प्रक्रिया में शामिल करें।
- विभागों के बीच समन्वय बढ़ाकर एकीकृत अनुकूलन रणनीति लागू करें।

4. वित्तीय उपकरणों का सृजन

- हरित जलवायु कोष, कार्बन क्रेडिट और PPP के माध्यम से संसाधन जुटाएँ।
- सूखा–प्रतिरोधी फसलों पर सब्सिडी, बाढ़–रोधी संरचनाओं के लिए अनुदान और माइक्रो–इंश्योरेंस योजनाएँ शुरू करें।

5. प्रौद्योगिकी एवं नवाचार

- मौसम पूर्वानुमान, ड्रिप सिंचाई और मोबाइल ऐप्स से वास्तविक समय डेटा उपलब्ध कराएँ।
- तटीय क्षेत्रों में जियो–स्पेशियल सर्वेक्षण के माध्यम से जोखिम क्षेत्रों की पहचान कर अलर्ट जारी करें।

6. निगरानी, मूल्यांकन व पुनरावलोकन

- योजनाओं की नियमित निगरानी और प्रभाव मूल्यांकन करें।
- समुदायों को निर्णय प्रक्रिया में शामिल कर पारदर्शिता सुनिश्चित करें।
- फीडबैक चक्र से समय–समय पर सुधार और पुनरावलोकन करें।

7. वैश्विक सहयोग व स्थानीय क्रियान्वयन

- अंतरराष्ट्रीय समझौतों और निधियों का लाभ उठाते हुए स्थानीय रणनीतियाँ बनाएं।
- दक्षिण–दक्षिण सहयोग के माध्यम से ज्ञान और संसाधन साझा करें।

इन उपायों को अपनाकर हम न केवल जलवायु परिवर्तन की धारणा को सुदृढ़ कर पाएंगे, बल्कि अनुकूलन अंतर को भी पाटकर एक सुरक्षित, समृद्ध और सतत भविष्य की दिशा में कदम बढ़ा सकेंगे। यह प्रयास केवल सरकारों या विशेषज्ञों का नहीं, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति, समुदाय और संगठन का साझा दायित्व है। आइए मिलकर इस वैश्विक चुनौती का सामना करें और आने वाली पीढ़ियों के लिए बेहतर दुनिया सुनिश्चित करें।

धान का बिचड़ा (नर्सरी) उत्पादन : विधि एवं महत्व

रेशू भारद्वाज[1,2] और अनिकेत अंबादासराव पाटिल[3]

[1]सस्य विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी- 221005, भारत, [2]कृषि, पशुपालन एवं सहकारिता विभाग, कृषि निदेशालय, रांची-834008, झारखंड, [3]कृषि महाविद्यालय, काष्टी, छत्रपती शिवाजी महाराज कृषी विज्ञान संकुल, काष्टी, ता. मालेगाव, म. फु. कृ. वि. राहुरी.

धान का बिचड़ा (नर्सरी) उत्पादन एक महत्वपूर्ण चरण है, जिससे स्वस्थ व बलवान पौध तैयार की जाती है। धान में बिचड़ा उत्पादन विधि इसलिए की जाती है क्योंकि यह फसल की उत्पादकता और स्वास्थ्य के लिए एक आवश्यक प्रारंभिक चरण है। बिचड़ा विधि से पौध नियंत्रित वातावरण में उगाई जाती है। इससे पौध स्वस्थ, सशक्त और रोग प्रतिरोधक बनती है, जो मुख्य खेत में तेजी से बढ़ती है। खेत की बेहतर तैयारी के लिए समय मिलता है। जब तक पौध नर्सरी में तैयार होती है, किसान मुख्य खेत की सफाई, जुताई और जल प्रबंधन अच्छी तरह कर सकता है। बीज और जल की बचत होती है। सीधी बुवाई की तुलना में कम बीज लगता है। नर्सरी में सिंचाई कम क्षेत्रफल में होती है, जिससे पानी की बचत होती है। रोग और कीट प्रबंधन में सहूलियत, नियंत्रित स्थान में रोग और कीट का प्रारंभिक नियंत्रण आसान होता है। इससे मुख्य खेत में संक्रमण का खतरा कम होता है। रोपण के समय लचीलापन होता है। मौसम अनुकूल होते ही बिछड़ा रोपकर फसल को समय पर लगाया जा सकता है। अनियमित बारिश या नहर जलप्रदाय की स्थिति में यह विशेष रूप से लाभकारी है। एक समान उम्र और आकार की पौध से समय पर फूलना और पकना होता है। उच्च उपज और बेहतर फसल प्रबंधन से फसल की उत्पादन क्षमता और गुणवत्ता बढ़ती है।

Fig.1: धान का बिचड़ा (नर्सरी) उत्पादनः गीली नर्सरी (Wet Nursery)

धान के बिचड़ा उत्पादन की मुख्य 3 विधियाँ हैंः–

1. सूखी नर्सरी विधि (Dry Bed Method)

उपयुक्त स्थान : जल निकासी वाली जमीन।

प्रक्रियाः 1–1.5 मीटर चौड़ी क्यारियाँ और जल निकासी के लिए 10–15 सेमी ऊँची नालियाँ बनाएं। अच्छी तरह से जोताई कर मिट्टी को भुरभुरी करें। 1.5–1 टन FYM + 2.5 किग्रा P_2O_5 + 2 किग्रा पोटाश डालें। प्रति एकड़ 40–50 किलोग्राम बीज लें (अच्छी तरह से अंकुरित करें)। बीज को कतार में या छिटक कर बो दें। नियमित हल्की सिंचाई करें (जलभराव न हो)। 20–25 दिन में बिचड़ा रोपाई योग्य हो जाता है।

2. गीली नर्सरी (Wet Nursery)

उपयुक्त क्षेत्रः 1 हेक्टेयर के लिए 20 सेंट (800 वर्ग मीटर)

SRI विधि के लिएः 100 वर्ग मीटर/हेक्टेयर

तैयारी की प्रक्रियाः क्षेत्र जलस्रोत के पास चुनें और जल निकासी की उचित व्यवस्था हो। 2 बार सूखी जुताई करें, 4 टन गोबर खाद (FYM) डालें। सिंचाई कर 2 दिन गीला छोड़ें, फिर 2 बार कीचड़ बनाएं (पडलिंग)। 1.5–2.5 कि.ग्रा. यूरिया + 4–5 किलो DAP एवं MDP 2–2.5 कि.ग्रा. डालें। 2.5 मीटर चौड़ी और 8–10 मीटर लंबी क्यारियाँ बनाएं। अंकुरित बीज समान रूप से छिटककर बोएं। बीज दरः 30–35 कि.ग्रा./हे. HYVs, 20–25 कि.ग्रा. हाइब्रीड, SRI: 7–10 कि.ग्रा./हे.।

3. डापोग/चटाई नर्सरी (Dapog or Mat Nursery)

डापोग विधि (Dapog Method) से धान का बिचड़ा उत्पादन एक आधुनिक और तेज तरीका है, जो विशेष रूप से मशीन से रोपाई (mechanical transplanting) के लिए उपयुक्त होता है। यह विधि कम समय, कम जगह, और जल की बचत के साथ उच्च गुणवत्ता वाला बिछड़ा देती है।

डापोग विधि से बिछड़ा उत्पादन की चरणबद्ध प्रक्रिया:

- **स्थान का चयन:** समतल और जल स्रोत के पास की जगह चुनें। छायादार स्थान से बचें।
- **सतह की तैयारी:** जमीन को समतल कर लें। वहाँ प्लास्टिक शीट, टाइल्स, या केले के पत्ते बिछाएं ताकि पौध की जड़ें जमीन में न चिपकें।
- **मिट्टी की परत:** प्लास्टिक पर 1 सेमी मोटी बारीक मिट्टी या गोबर की खाद की परत फैलाएं (कुछ किसान केवल पानी में भी करते हैं)।
- **बीज की तैयारी:** अच्छी गुणवत्ता वाले बीज लें। बीज को भिंगोकर 24 घंटे तक रखें, फिर 24 घंटे गर्म स्थान पर अंकुरण के लिए रखें।
- **उपयुक्त क्षेत्र:** 1 हेक्टेयर के लिए 100 वर्ग मीटर (2.5 सेंट/हेक्टेयर)

तैयारी की प्रक्रिया: 4 घन मीटर मिश्रण/100 वर्ग मीटर नर्सरी।

70% मिट्टी + 20% प्रेसमड/स्लरी/FYM + 10% भूसी। इसमें 1.5 किग्रा DAP पाउडर या 2 किग्रा 17–17–17 NPK मिलाएं।

- **सांचे में भरना:** 0.5 मीटर x 1 मीटर x 4 सेमी के लकड़ी के सांचे में मिट्टी मिश्रण भरें और जमीन पर जमाएं।
- **बीज बोना:** 24 घंटे भिगोएँ, फिर 24 घंटे अंकुरित करें। 2–3 मिमी लंबी जड़ वाले बीज बोएँ और 5 मिमी सूखी मिट्टी से ढकें।
- **सिंचाई:** रोजाना हल्की सिंचाई करें। पानी सिर्फ नमी बनाए रखने के लिए हो – जलभराव से बचें।
- **देखभाल:** पक्षियों से बचाव करें (जाल या डराने के उपाय से)। अत्यधिक गर्मी या बारिश से पौध को बचाएं।
- **बिचड़े की कटाई:** 12–15 दिनों में पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। यह पौध मशीन से उठाई जा सकती है क्योंकि यह चटाई की तरह होती है।

डापोग विधि के लाभ: खेत की आवश्यकता नहीं होती। पौध जल्दी तैयार होती है (12–15 दिन में)। एकसमान और मजबूत बिचड़ा मिलता है। रोपाई में समय और श्रम की बचत।

सारांश तुलना तालिका:

विधि	क्षेत्र आवश्यकता	पौध तैयार होने का समय	पानी की जरूरत	प्रमुख विशेषताएँ
गीली नर्सरी	800 m²/ हे	20–25 दिन	मध्यम से अधिक	पारंपरिक विधि, कीचड़ में बुआई
डापोग नर्सरी	100 m²/ हे	14–20 दिन	कम	मशीन से रोपाई योग्य, जगह की बचत
सूखी नर्सरी	800 m²/ हे	20द25 दिन	कम	जल की कमी में उपयोगी, सूखी बुआई।

तिलहनी फसलों में खरपतवार नियंत्रण

राघव ठाकुर, सह-अधिष्ठाता आर.के.एम.वेरी, राँची

तिलहनी फसलें खरीफ व रबी, दोनों ऋतु में बोई जाती है। खरीफ की फसलों में मूंगफली व तिल एवं रबी की फसलों में सरसों, लाही, सूरजमुखी एवं अलसी मुख्य है।

1. **मूँगफली:** खरीफ में पहली वर्षा के बाद मूँगफली खेतों में बोई जाती है। इसके साथ–साथ खरपतवार भी अंकुरित होते हैं और अपनी बढ़बार करते हैं, जैसे इकाइनोक्लोआ कुसगेली, इकोलोनम, ब्रेकेरिया रोमासा, एल्यूसाइन इंडिका, एमेरेन्यस विरिसिड कोमेलिना वैधालेन्सिस आदि। खरपतवारों की रोकथाम के लिए खेत में ढ़ेले नहीं होने चाहिए। फाइलेन्थश निरूरी, सोलेनम नाइग्रम, यूकोर्बिया हिटी, साइपेरस इरिया व साइनोडॉन डेक्टाइलॉन मूँगफली के खेत में पाये जाने वाले मुख्य खरपतवार है। मूंगफली की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए खेत को फसल की बढ़वार के प्रारंभिक 4 से 5 सप्ताह तक खरपतवार रहित रखना नितांत आवश्यक है। इस अवधि के बाद निकलने वाले खरपतवार फसल से प्रतियोगिता नहीं कर पाते। खरपतवार मूँगफली के खेत से बोआई के 30 दिन बाद तक नियमित रूप से निकालना आवश्यक है। इसके बाद खरपतवार निकालने से फसल में हानि होने का भय रहता है।

2. **सोयाबीन:** सोयाबीन एक महत्वपूर्ण फसल है क्योंकि इसका इस्तेमाल दलहन, तिलहन तथा सब्जी, तीनों की रूपों में किया जाता है। इसमें प्रोटीन मात्रा लगभग 42 प्रतिशत तथा तेल की मात्रा 20–22 प्रतिशत होती है। सोयाबीन की बोआई अधिकांशतः खरीफ ऋतु में पहली वर्षा हो जाने के बाद की जाती है। सोयाबीन की अचछी बढ़वार के लिए फसल की प्रारंभिक अवस्था में अधिक तापमान और नम जलवायु ठीक रहती है। ये दशाएँ तथा अंकुरण के आदि प्रारंभिक अवस्था में फसल की धीमी बढ़वार खरपतवारों के उगाने और तेजी से बढ़ने को प्रोत्साहित करती है। सोयाबीन की फसल में प्रारंभ के 40–45 दिनों तक खरपतवारों की अच्छी रोकथाम जरूरी है। बाद में फसल के खूब बढ़ जाने पर खरपतवार उगने और पनपने नहीं पाते। यदि इन खरपतवारों की रोकथाम फसल की प्रारभिक अवस्था में नहीं की गई तो ये उपज में लगभग 50–60 प्रतिशत की कमी (तराई क्षेत्र में) कर देते हैं।

   सोयाबीन में खरपतवार साधारणतया खुरपी और हो से, तथा कतारों को बीच देशी इल से निकाले जाते हैं। निराई अक्सर समय से नहीं हो पाती और उसके होने तक खरपतवार फसल को काफी हानि पहुंचा चुके होते हैं। कभी कभी अधिक और लगातार वर्षा होने के कारण भी निराई करने का अवसर नहीं मिल पाता है।

प्रमुख खरपतवार

सोयाबीन के खेती में घास तथा चौडी पत्तियों वाले एकवर्षी, और कहीं कहीं बहुवर्षी खरपतवार बहुत उगते हैं। घास कुल के एकवर्षी खरपतवार इकाइनोक्लोआ कोलोनम (सांबा) इ. क्रसगेली, डैक्टीलोक्टीनियम इजिप्शियम तथा एल्यूसाइन इंडिका है। चौड़ी पत्तियों बाले एकवर्षी खरपतवारों में फाइसेलिस मिनिमा (जंगली रसभरी), सोलेनम नाइग्रम (मकोय), एमेरेन्थस विरिडिस (जगली चौलाई), एमेरेन्धस स्पाइनोसस (कंटीली चौलाई), पोर्टुलका क्याड्रिफिडा (नुनिया), सिलीसिया आर्जेन्शिया (सफेद मुर्ग) कोमेलाइना बंधालेसिस (कनकौआ), कोर्कोरस एक्यूटेन्गुलस (जंगली जूट), व इक्लिप्टा एल्बा (मंगरा), तथा बहुवर्षीय खरपतवारों में साइपेरस (मोथा), साइनोडॉन डेक्टाइलॉन व सोर्धम हेलीपेन्स (बनचरी) प्रमुख है।

3. **सूरजमुखी:** सूरजमुखी की खेती उत्तरी भारत में रबी के मौसम में होती है और इसमें करीब करीब वे ही खरपतवार उगते हैं जो कि सरसों की फसल में भी पाए जाते हैं। चूँकि सूरजमुखी की फसल को 0.5 से 0.75 मीटर की दूरी पर बनीं पंक्तियों में बोया जाता है, अतः फसल के प्रारंभिक दिनों में खरपतवारों का बाहुल्य होता है। इसलिए यदि फसल को प्रारंभिक 25 दिन से 30 दिन तक खरपतवार रहित रखा जाए तो बाद में निकलने वाले खरपतवार फसल से प्रतियोगिता नहीं कर पाते।

4. **तोरिया/सरसों:** फसल के अंकुरण के साथ एक व बहुवर्षी चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का भी अंकुरण होता है। चीनोपोडियम एल्बम, लेथाइरस एफाफा मेलीलोटस इंडिका, सिरसियम आर्वेन्स, फ्यूमेरिया पार्वीफ्लोरा, एस्फोडीलस टेन्यूइफोलियम, साइपेरस रोटंडस मुख्य है। खरवपतवार सरसों की उपज को 20 से 30 प्रतिशत तक कम करते हैं। यह आवश्यक है कि खरपतवार फसल के प्रारंभिक 3 से 4 सप्ताह के अन्दर ही निकाल दिए जाएँ क्योंकि फसल की बढ़वार बहुत धीमी होती है और खरपतवारों का निकलना कठिन हो जाता है। खरपतवारों को खुरपी, फावड़े व हो द्वारा निकाला जा सकता है। विभिन्न खरपतवार नाशियों के नाम, मात्रा और छिड़कने का समय निम्न सारिणी में दिये जा रहे हैं।

फसल	खरपतवार नाशी रसायन (व्यापारिक नाम)	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्राम/हे.)	व्यापारिक मात्रा (ग्राम/हे.)	छिड़काव का समय	नियंत्रित खरपतवारों के प्रकार एवं अन्य टिप्पणी
मूंगफली	एलाक्लोर (लासो)	1500–2000	3000–4000	बुआई के 0–3 दिनों पर	कई घास कुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	ब्यूटाक्लोर (मैचेट, धानुक्लोर)	1000–1250	2000–2500	बुआई के 0–3 दिनों पर	कई घास कुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	इमाजिथेपिर (परसूट, लगाम)	100	1000	बुआई के 0–3 दिनों पर	विविध प्रकार के घास कुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	फ्लूक्लोरालिन (बासालिन)	750–1000	1500–2000	बुआई पूर्व	कई घास कुल के एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार। छिड़काव के तुरन्त बाद मिट्टी में मिला दें
	मेटोलाक्लोर (डुअल)	1000–1500	2000–3000	बुआई के 0–3 दिनों पर	कई घास कुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	आक्सीफ्लोरफेन (गोल)	250	1000	बुआई के 0–3 दिनों पर	विविध प्रकार के खरपतवार
	पेन्डीमेथालिन (स्टाम, पेन्डीस्टार)	750–1000	2500–3000	बुआई के 0–3 दिनों पर	कई घास कुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	क्वीजेलोफोप इथाईल (टरगा, सुपर)	40–50	800–1000	बुआई के 15–20 दिनों पर	संकरी पत्ती एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
सोयाबीन	एलाक्लोर (लासो)	1500–2000	3000–4000	बुआई के 0–3 दिनों पर	कई संकरी, चौड़ी पत्ती एवं मोथा
	क्लोरीम्यूरोन (क्यूरिन)	6–9	30–40	बुआई के 15–20 दिनों पर	कई संकरी, चौड़ी पत्ती एवं मोथा

फसल	खरपतवार नाशी रसायन (व्यापारिक नाम)	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्राम/हे.)	व्यापारिक मात्रा (ग्राम/हे.)	छिड़काव का समय	नियंत्रित खरपतवारों के प्रकार एवं अन्य टिप्पणी
सोयाबीन	फेनोक्साप्रोप (व्हिप सुपर)	8—10	800—1000	बुआई के 15—20 दिनों पर	संकरी खरपतवार। अन्य खरपतवार नियंत्रण हेतु अन्य खरपतवारनाशी के साथ पूरक में व्यवहार करें।
	फेनोक्साप्रोप (व्हिप सुपर+क्लोबिन)	80+6	800+30	बुआई के 20 दिनों पर	विविध प्रकार के सेकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	फ्लूक्लोरालिन (बासालिन)	1000	2000	बुआई पूर्व	विविध प्रकार के घास कुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	इमाजिथेपिर (परसूट, लगाम)	100	1000	बुआई के 0—3 दिनों पर	विविध प्रकार के संकरी पत्ती एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	मेट्रीब्यूजिन (सेन्करा, टाटा मेटी)	350—525	500—750	बुआई के 0—3 दिनों पर	संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
	पेन्डीमेथालिन (स्टाम, पेन्डीस्टार)	750—1000	2500—3000	बुआई के 0—3 दिनों पर	कई घास कुल के एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार। छिड़काव के तुरन्त बाद मिट्टी में मिला दें
	क्वीजेलोफोप इथाईल (टरगा, सुपर)	40—50	800—1000	बुआई के 20—25 दिनों पर	संकरी पत्ती वाले खरपतवार चौड़ी पत्ती एवं मोथा घास पर कम असर
सरसों/ तोरिया	फ्लूक्लोरालिन (बासालिन)	1000	2000	बुआई पूर्व	कई घास कुल के एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार। छिड़काव के तुरन्त बाद मिट्टी में मिला दें
	पेन्डीमेथालिन (स्टाम, पेन्डीस्टार)	750—1000	1000—1250	बुआई के 0—3 दिनों पर	कई संकरी एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार। असामयिक वर्षा से फसल को नुक्सान हो सकता है।
	आईसोप्रोटयूरान (मैनी)	750—1000	1000—1250 (75 डबलू.पी.) 1500—2000 (50 डबलू.पी.)	बुआई के 0—3 दिनों बाद या जमाव के 7—10 दिन बाद	कई संकरी एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार। असामयिक वर्षा से फसल को नुकसान हो सकता है। पौधे को गीली अवस्था में छिड़काव न करें।
तीसी/ तिल/ सरगूजा	फ्लूक्लोरालिन (बासालिन)	1000	2000	बुआई पूर्व	कई घास कुल के एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार। छिड़काव के तुरन्त बाद मिट्टी में मिला दें
	आईसोप्रोटयूरान (मैनी)	1000—1500	1250—1500 (75 डबलू.पी.) 2000—2500 (50 डबलू.पी.)	बुआई के 20—25 दिनों पर बाद	कई संकरी एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार। असामयिक वर्षा से फसल को नुकसान हो सकता है। पौधे को गीली अवस्था में छिड़काव न करें।
	पेन्डीमेथालिन (स्टाम, पेन्डीस्वर)	750—1000	2500—3000	बुआई के 0—3 दिनों पर	कई संकरी एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार

नोटः शाकनाकी का छिड़काव करने के पूर्व खेत में नमी रहना अति आवश्यक है। एक हेक्टेयर जमीन मे छिड़काव करने के लिए 600 लीटर पानी का व्यवहार करना चाहिए।

कृषि पराशर में वर्णित कृषि और मौसम विज्ञान पर प्राचीन अंतर्दृष्टियाँ

अनित साहा और सुदर्शन बिस्वास
रामकृष्ण मिशन विवेकानंद शैक्षिक और अनुसंधान संस्थान, कृषि, ग्रामीण और जनजातीय विकास (ARTD) के संकाय, मोराबादी, रांची

कृषि–पराशर, 400 ईसा पूर्व में लिखित, एक प्राचीन संस्कृत ग्रंथ है जो ऋषि पराशर द्वारा रचित है और पूर्वतः कृषि पर केंद्रित है। यह भारतीय कृषि साहित्य में एक अनोखा स्थान रखता है। यह ग्रंथ कृषि–कार्य, मौसम विज्ञान, और मौसमी योजनाओं से जुड़े बहुमुल्य ज्ञान प्रदान करता है। इसमें सतत् खेती की तकनीकों को वैज्ञानिक और आध्यात्मिक तत्वों के साथ मिश्रित किया गया है। इसकी महत्ता इसकी व्यापक दृष्टि में निहित है, जिसमें उपज के लिए व्यावहारिक और प्रासंगिक नियमों को शामिल किया गया है, जो आज भी उपयोगी हैं। यहाँ हम प्राचीन भारत में मौसम विज्ञान के ज्ञान पर चर्चा करेंगे:

बादलों के प्रकार:

- **आवर्त** : केवल एक स्थान पर वर्षा होती है।
- **संवर्त** : सभी क्षेत्रों में समान रूप से पानी देता है।
- **पुष्कर** : सीमित और अल्प वर्षा करता है।
- **द्रोण** : अत्यधिक और भरपूर वर्षा प्रदान करता है।

जल का माप– आढक नामक इकाई का वर्णन किया गया है। इसका माप 100 योजन की चौडाई और 30 योजन (1 योजन = 4 or 5 माइल) की गहराई से होता है। यह प्राचीन समय में वार्षिक वर्षा का निर्धारण करने की मानक इकाई थी।

वर्षा का आकलन– वर्षा के पूर्वानुमान के लिए विभिन्न ग्रहों की स्थिति, चंद्रमा और सूर्य के नक्षत्रों के आधार पर संकेत दिए गए हैं। उदाहरण के लिएः–

- यदि चंद्रमा रोहिणी नक्षत्र में हो और वर्षा हो रही हो, तो अच्छी फसल की संभावना है।
- आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, और अन्य नक्षत्रों में वर्षा का उल्लेख इस बात पर करता है कि पानी की उपलब्धता कैसे निर्धारित की जाए।

पृथ्वी और बादलों की गतिशीलता– ग्रंथ में भूमि और पर्यावरण के साथ वर्षा का संबंध दिखाया गया है। 'कुंभ' और 'वृश्चिक' राशि के बीच यदि वर्षा होती है, तो यह दर्शाता है कि सातवें माह में फसलें अधिक उपजाऊ होंगी।

कृषि और पर्यावरणीय संकेत– चींटियों का अंडे लेकर बाहर आना, मेंढकों का टर्राना, बादलों की गडगड़ाहट, और आकाश में तेज़ रोशनी प्राचीन भारतीय कृषि विज्ञान के अनुसार आगामी वर्षा के संकेतक माने जाते थे।

मासों के अनुसार वर्षा का विवरण:

पौष (Paush)– पौष माह में यदि आकाश धूल से भरा हुआ हो और पश्चिम दिशा में बिजली की चमक हो, तो यह संकेत है कि पृथ्वी जल्द ही पानी से भर

जाएगी। यदि इस माह में हल्की बारिश या कुहासा हो, तो सातवें महीने में प्रचुर जल की उपलब्धता होगी।

माघ (Magh)– माघ के शुक्ल पक्ष की सप्तमी तिथि पर यदि बारिश होती है या बादलों का जमाव होता है, तो पूरे वर्ष भर अच्छी फसल होने का संकेत मिलता है। इस समय की वर्षा को शुभ और संपन्नता का प्रतीक माना गया है।

फाल्गुन (Phalgun)– सूर्य के कुंभ राशि में रहने के दौरान यदि रोहिणी नक्षत्र में वर्षा हो, तो विभिन्न प्रकार की जल धारा गिरने की संभावना होती है। इस दौरान सबसे कम, मध्यम, और अत्यधिक वर्षा दर्ज की जा सकती है।

चैत्र (Chaitra)– चैत्र के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि पर यदि रविवार हो, तो यह वर्ष मध्यम बारिश का संकेत करता है। यदि सोमावार को हो, तो वर्षा अत्यधिक होगी और पृथ्वी पूरी तरह से जलमग्न हो जाएगी। अन्य दिनों में वर्षा का प्रभाव धीरे–धीरे कम होता है।

वैशाख (Vaishakh)– वैशाख के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि पर यदि बारिश होती है, तो यह पूरे वर्ष में भारी वर्षा का संकेत देती है। इस माह में यदि बादल पश्चिम दिशा में दिखें, तो बारिश का समय निर्धारित किया जाता है।

ज्येष्ठ और आषाढ़ (Jyestha & Ashadh)– ज्येष्ठ में यदि चित्त, स्वाती और विशाखा नक्षत्रों में बादल न हों और श्रावण माह में उन्हीं नक्षत्रों में वर्षा हो, तो यह वर्ष प्रचुर फसल का संकेत देता है। आषाढ़ माह की पूर्णिमा तिथि पर विभिन्न दिशाओं से आने वाली हवाएँ वर्षा की तीव्रता को दर्शाती हैं।

श्रावण (Shravan)– श्रावण माह में रोहिणी नक्षत्र में वर्षा हो तो यह तब तक जारी रहती है जब तक भगवान विष्णु जागृत नहीं होते। यदि इस नक्षत्र में वर्षा नहीं होती है, तो यह कृषि के लिए गंभीर संकट का संकेत है।

सद्योवृष्टि का ज्ञान (तत्काल वर्षा का ज्ञान):
प्राचीन भारतीय कृषि ग्रंथ *कृषि–पराशर* तत्काल वर्षा के संकेतों को प्रकृति के अनुकूल आकलन में बडे विस्तार से व्याख्यायित करता है। ये संकेत किसानों को तुरंत वर्षा की संभावना को समझने में मदद करते हैं।

तत्काल वर्षा के प्राकृतिक संकेत:

1. चींटियां और मेंढक:

- जब चींटियां अपने बिलों से अंडों के साथ बाहर निकलती हैं और अचानक मेंढक तेज आवाज में टर्राने लगते हैं, तो तत्काल बारिश होने की संभावना प्रबल होती है।

2. वन्यजीवों का व्यवहार:

- बिलों में रहने वाले जीव जैसे बिल्ली, नेवले, सांप और अन्य छोटे प्राणी यदि अचानक चहलकदमी करने लगें और शलभ (कीट) उत्साहित अवस्था में भागें, तो यह वर्षा का संकेत है।

3. मोर का नृत्य:

- मोर का नाचना और बच्चों द्वारा रास्तों पर धूल से पुल बनाना भी निकट भविष्य में बारिश का प्रतीक माना गया है।

4. मनुष्यों और वृक्षों का व्यवहार:

- आघात और वात रोगों से पीडित लोगों को शारीरिक दर्द महसूस होना और सर्प का वृक्षों के ऊपर चढ़ना तत्काल वर्षा के स्पष्ट संकेत माने जाते हैं।

5. पक्षी और आकाश के संकेत:

- जलचर पक्षियों के पंखों का धूप में सूखना और टिड्डियों (Locusts) का शोर मचाना आसन्न वर्षा का सूचक है।

निष्कर्षः कृषि–पराशर पर व्यापक चर्चा प्राचीन भारतीय ज्ञान का एक अनमोल खजाना उजागर करती है, जो कृषि प्रथाओं को मौसम विज्ञान की अंतर्दृष्टि के साथ गहराई से जोडती है। इस पुस्तक में मौसम विज्ञान का विस्तृत अध्ययन, जैसे बादलों का वर्गीकरण और तत्काल वर्षा के संकेत, आधुनिक कृषि चुनौतियों का समाधान करने में इसकी प्रासंगिकता को आज भी सशक्त करता है। कृषि–पराशर केवल एक कृषि मार्गदर्शिका नहीं है, बल्कि यह एक सांस्कृतिक धरोहर भी है, जिसमें भारत की कृषि संस्कृति को आकार देने वाले सदियों पुराने अनुभवजन्य ज्ञान और आध्यात्मिक प्रथाओं को समेटा गया है। ऐसे प्राचीन ग्रंथों का पुनः अध्ययन और विश्लेषण टिकाऊ खेती और पर्यावरणीय संतुलन के आधार पर भविष्य के कृषि नवाचारों को प्रेरित कर सकता है।

पारंपरिक संकेत का कृषि में व्यवहार :

संकेत / व्यवहार	मौसम या कृषि संकेत	व्याख्या / उपयोग
मेंढकों का टर्राना	शीघ्र वर्षा	वर्षा ऋतु की शुरुआत का संकेत
मोर का नृत्य	वर्षा निकट	वातावरण में नमी और वर्षा की संभावना
गायों का बार–बार उठना–बैठना	मौसम परिवर्तन	असामान्य व्यवहार से जलवायु संकेत मिलते हैं
बिल्ली, नेवला, सांप की सक्रियता	वर्षा का पूर्वाभास	पशु व्यवहार से पर्यावरणीय बदलाव का अनुमान
वात रोगियों (गाय, बैल) को पीड़ा	वातावरण में नमी	वर्षा से पहले पशुओं में असहजता देखी जाती है
सर्प का वृक्ष पर चढ़ना	वर्षा की संभावना	ऊर्ध्वगामी गति वातावरणीय बदलाव दर्शाती है
जलचर पक्षियों के पंख सूखना	आसन्न वर्षा	जलवायु में बदलाव का सूक्ष्म संकेत
बकरी / भेड़ का झुंड में हलचल	मौसम परिवर्तन	सामूहिक व्यवहार से वातावरण का संकेत
पशुओं का जल स्रोत की ओर आकर्षण	वर्षा निकट	जल की खोज वर्षा की पूर्व सूचना देती है
गाय के दूध की गुणवत्ता में बदलाव	भूमि की उर्वरता और जलवायु स्थिति का संकेत	आहार–विहार से पर्यावरणीय स्थिति का आकलन

''पशु केवल संसाधन नहीं, हमारे पर्यावरण सहयोगी हैं। उनका पर्यवेक्षण प्राकृतिक खेती की कुंजी है।''

मत्स्य पालन तालाब में चूने का उपयोग कब करें

अरूण भक्त
रामकृष्ण मिशन आश्रम, मोराबादी, रांची

- चूने का प्रयोग मछलियों के लिए लाभदायक होता है। कभी–कभी इसका प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन खासकर जब– पानी का पी.एच. कम हो।
- जब तालाब के पानी की कठोरता 20 पी.पी.एम. से कम हो।
- जब पानी की क्षारीयता कम हो।
- जब तालाब के तल में काफी कीचड़ हो और बहुत दिनों से उसकी सफाई नहीं की गयी हो।
- जब तालाब के तल में काफी जैविक खाद हो तथा पानी में घुले ऑक्सीजन की कमी की संभावना हो।
- जब पानी में कार्बन–डाइऑक्साइड की मात्रा अधिक हो।
- जब मछलियों में बीमारी फैलने की संभावना हो। बरसात के दिनों में जब २–३ दिनों से सूर्य न निकला हो या रूक–रूक कर पानी बरसता हो, चूना का प्रयोग काफी लाभदायक होता है।

तालाब के पानी के पी.एच.के आधार पर प्रति हेक्टर तालाब में चूने के प्रयोग की अनुमोदित मात्रा निम्नलिखित है :–

क्र. सं.	तालाब में पानी का पी. एच. मान	तालाब के प्रति हेक्टर क्षेत्र में चूने के प्रयोग की अनुमोदित मात्रा
1	5.5–6.0 तक	1500 किलो
2	6.0–6.5 तक	1000 किलो
3	6.5–7.0 तक	500 किलो
4	7.0–7.5 तक	300 किलो
5	7.5–8.0 तक	200 किलो

तालाब में चूने का प्रयोग निम्नलिखित तीन विधियों द्वारा किया जा सकता है –

- सूखे तालाब के तल में चूने का प्रयोग।
- तालाब के पानी में चूने का प्रयोग।
- तालाब में भरते हुऐ पानी में चूने का प्रयोग।

इन विधियों द्वारा तालाब में चूने का प्रयोग कर सकते हैं। प्रयोग के पूर्व यह जानकारी रखना आवश्यक है कि चूने का प्रयोग किस कारण के लिए किया जा रहा है। अगर मछलियों में जैविक खाद की अधिकता के कारण बीमारी हो रही है, तो पानी में चूना घोलकर छिड़कना अच्छा होता है। जब तालाब के तल में चूने का प्रयोग करना हो, तो यह काम गर्मी के दिनों में करना चाहिए जब तल की मिट्टी गीली हो।

सभी जगह बराबर चूने का प्रयोग करना चाहिए चाहे चूना पानी में दिया जा रहा हो या तालाब के तल पर। जब पानी में कली चूने का प्रयोग किया जा रहा हो तो उसके पी.एच. का भी ख्याल रखना चाहिए, क्योंकि पानी का पी.एच. काफी तेजी से बढ़ता है। तालाब के तल में लगने वाले चूने की मात्रा मिट्टी के गुण एवं उसके पी.एच. पर निर्भर करती है। जब मिट्टी अम्लीय न हो और पी.एच. और क्षारीयता बढ़ाने के लिए प्रयोग करना हो, तो इसकी मात्रा अम्लीयता के स्तर पर निर्भर करती है। अगर तालाब में काफी मोटा कीचड़ जमा हो, तो थोड़ी अधिक मात्रा में चूने का प्रयोग आवश्यक होगा। लेकिन जब तल बालुई हो और पतला कीचड़ हो तो कम मात्रा में डालने की सलाह दी जाती है। अगर तालाब में आते हुए पानी में चूना डाला जाये, तो चूना छिड़काव की आवश्यकता नहीं होती है।

तालाबों की वांछित विशेषतायें

मछली (छोटी मछली) के साथ तालाबों की उपयुक्तता के लिए कुछ विशेष गुणों की आवश्यकता होती है। यथा :–

क) तालाब का बहुत अधिक गहरा होना या बिलकुल गहरा न होना उपयुक्त नहीं होता है। अत्यधिक गहरे तालाब में जिस प्रकार मछलियाँ ठीक से बढ़ नही पाती हैं, उसी प्रकार बिना गहराई वाले तालाबों में, धूप की गर्मी से, मछलियों में महामारी फैलने की संभावना बनी रहती है। आठ से दस फुट गहरा पानी (बरसात के दिनों में) वाला तालाब मछली पालन के लिये विशेष उपयुक्त होता है।

ख) तालाब की मेढ़ ऊँची और ढालू होना आवश्यक है। तालाब की मेढ़ आस–पास की जमीन से ऊँची रहने पर वर्षा के पानी से तालाब प्लावित नहीं हो पाता है। मछलियों में महामारी फैलने का भय नहीं रहता है, क्योंकि ऊँची मेढ़ की वजह से, बाहरी गंदगी आदि तालाब में प्रवेश कर पानी को दूषित नहीं कर पाती है।

ग) तालाब की लम्बाई ज्यादा और चौड़ाई कम होनी चाहिए।

तालाब की लम्बाई और चौड़ाई का अनुपात ३.२ का होता है। ऐसे तालाबों में, छोटी (जीरा) मछलियों को दौड़ धूप करने का मौका मिल पाता है और वे तेजी से बढ़ पाती हैं।

घ) तालाब की तह वाली जमीन समतल होनी आवश्यक है।

इससे मछली पकड़ने में सुविधा होती है। तालाब की तह काली नरम कांदो या भुरभुरी मिट्टी से परिपूर्ण रहने पर उसे उत्पादक तालाब कहा जाता है। तालाब की तह में कम से कम आधा फुट काली कीचड़ वाली मिट्टी का रहना अति उत्तम माना जाता है। सही उपचार के लिए तालाब के पूरे पानी को निकाल कर तल में जमी हुई कीचड़ को पूरी तरह से साफ कर देना चाहिए।

ङ) तालाब के किनारे–किनारे, विशेषकर पूर्व और दक्षिण किनारों में अत्यधिक पेड़ पौधों का नहीं रहना ही वांछनीय है। तालाब के पानी में सबेरे की धूप नहीं पड़ने पर, मछलियां अच्छी तरह से नहीं बढ़ पाती हैं। इसके अलावा, तालाब के पानी में पेड़ से पत्ते गिरकर सड़ते हैं और पानी को दूषित करते हैं।

च) तालाब की तल यदि कंकड़ और बालू से भरी हुई हो, तो उस तालाब में मछलियां अच्छी तरह से नहीं बढ़ती हैं। इसलिये नव–निर्मित तालाबों में, निर्माण के वर्ष से ही मछली का पालन करना उचित नहीं होता है। कारण, इस प्रकार के तालाबों की उत्पादन शक्ति कुछ खास नहीं होती है।

छ) तालाब के पानी में पर्याप्त मात्रा में पौधे प्लवक एवं जंतु प्लवक का रहना आवश्यक होता है। तालाब के पानी का रंग हल्का हरा होने पर, वह मछली पालन के लिये विशेष उपयोगी होता है।

ज) जो मछलियों के लिए खाद्य वस्तु नहीं है, ऐसे खर–पतवार और पौधे प्लवक मछली पालन के लिए हानिकारक होते हैं। इसलिए तालाबों में मछली छोड़ने के पूर्व, ऐसे हानिकारक तत्त्वों को हटाकर साफ कर देना चाहिए।

झ) तालाब में आवांछित वस्तुओं और छोटी मछलियों को खा जाने वाली मछलियों का रहना उचित नहीं है।

Deficit Irrigation : A strategy for achieving sustainable yield

Reshu Bhardwaj[1,2] , Shweta Kumari[3] , Aniket Ambadasrao Patil[4]

[1]Department of Agronomy, Institute of Agricultural Sciences, Banaras Hindu University, Varanasi- 221005, India, [2]Department of Agriculture, Animal Husbandry and Co-operative, Directorate of Agriculture, Government of Jharkhand, Ranchi-834008, Jharkhand, [3]Department of Agricultural Extension Education, Ranchi Agriculture College, Birsa Agricultural University, Ranchi, Jharkhand., [4]College of Agriculture, CSMKVS, Kashti Tq. Malegaon, MPKV Rahuri, Maharashtra.

Deficit irrigation (DI) is an approach that involves applying less water than the crop's full water requirement during certain periods of growth, especially in rainfed areas where water is scarce. The aim is to optimize water use while maintaining acceptable crop yields. This technique can be particularly useful in regions facing water scarcity or irregular rainfall to conserve water and improve water-use efficiency, especially in areas with limited water availability

Key Features of Deficit Irrigation

1. **Water Stress Management:** By intentionally applying less water than usual, deficit irrigation helps crops withstand periods of drought or low water availability, which is common in rainfed areas.
2. **Timing of Water Stress:** The most effective use of deficit irrigation is during periods when crops are most tolerant to water stress, typically during certain stages of crop development (like vegetative growth or post-harvest). For example, in crops like wheat, the grain-filling stage is often a critical period where irrigation can be reduced without significantly affecting yield.
3. **Water-Efficient Cropping Systems:** Deficit irrigation is integrated into water-efficient farming systems that combine different water-saving techniques. This may include using rainwater harvesting, mulching, or selecting drought-tolerant crop varieties to complement irrigation strategies.
4. **Optimized Yield vs. Water Use:** The goal of deficit irrigation is to achieve a balance between maintaining acceptable yield levels and using water efficiently. The crop may not reach its maximum potential yield, but it ensures that water resources are used sustainably without causing significant economic losses.

Methods of Deficit Irrigation

There are several methods of deficit irrigation, each suited for different crop types, growth stages, and climatic conditions. Here are the different methods of deficit irrigation:

1. **Scheduled Deficit Irrigation (SDI):** Scheduled deficit irrigation is a planned and controlled approach where water application is reduced during certain periods of crop growth, particularly during non-critical growth stages (e.g., vegetative or early reproductive stages). Water is applied at regular intervals but at reduced amounts compared to the crop's full water requirement. The reduction is scheduled based on crop sensitivity to water stress at different growth stages. Best for crops that can tolerate moderate water stress, such as wheat, barley, and cotton.
2. **Continuous Deficit Irrigation (CDI):** In continuous deficit irrigation, water is applied throughout the crop's growing season but at a reduced rate, often below the crop's full water needs. The goal is to maintain consistent, though lower, water availability.This method can be applied either uniformly or with slight adjustments during the crop's growth phases. It works well in regions with consistent water scarcity or when crops are not highly sensitive to water stress. Best for crops like olives, almonds, and other drought-tolerant species.

3. **Partial Root zone Drying (PRD):** Partial Rootzone Drying is a method where only one half of the root zone is irrigated, while the other half is allowed to dry. After some time, the irrigation is switched to the other root zone. This method uses a combination of soil moisture monitoring and switching between irrigated and dry root zones. Best for crops like grapes, tomatoes, and certain fruit trees that can tolerate partial root-zone drying.
4. **Deficit Irrigation at Critical Stages:** In this method, water is applied at or near the crop's full requirement during critical growth stages (such as flowering, fruit setting, or grain filling) but is reduced during non-critical stages (like vegetative growth). Water is withheld during less sensitive periods of growth (early season or late season), and the deficit irrigation is applied only when the crop's water needs are high, like during the reproductive phase. Applied in crops such as maize, rice, and cotton, where water demand during critical stages is crucial for yield formation.
5. **Alternate Furrow Irrigation (AFI):** Furrows are alternated for irrigation, so only every second furrow receives water. This method conserves water and can improve water distribution and soil aeration in the non-irrigated furrows. Eg. Crops like rice, cotton, and maize, particularly in areas with row-based planting.
6. **Trickle (Drip) Irrigation with Reduced Water Volumes:** In deficit irrigation, the volume of water delivered through the drip system is reduced, making it more efficient and precise. Water is applied directly to the root zone, and irrigation frequency or duration is reduced compared to traditional drip irrigation, aiming to minimize water use while still supporting plant growth. Examples: High-value crops like tomatoes, cucumbers, strawberries, and vineyards.
7. **Sprinkler Irrigation with Reduced Frequency:** Sprinkler irrigation systems distribute water through a system of pipes and nozzles, mimicking rainfall. In deficit irrigation, the frequency of sprinkler irrigation is reduced, but the water applied is concentrated during critical periods. Reduced irrigation frequency or shorter irrigation cycles are used to conserve water. Sprinklers can cover larger areas, but water is applied more infrequently or in smaller doses. Crops like corn, rice, and vegetable crops are suitable for overhead irrigation.
8. **Subsurface Drip Irrigation (SDI):** Water is applied below ground level through a network of buried pipes and emitters, reducing evaporation losses and ensuring efficient water use. Examples: Row crops like tomatoes, lettuce, and carrots, or orchards and vineyards.
9. **Rainwater Harvesting with Deficit Irrigation:** This involves collecting and storing rainwater during periods of rainfall and using it for deficit irrigation during drier periods. Stored rainwater can be used in combination with other irrigation methods, such as drip or sprinkler irrigation, during dry spells. Examples: Crops like fruit trees, cereals, and legumes, where seasonal rainfall can be stored and used during water-scarce periods.
10. **Shallow Irrigation:** This method uses smaller, frequent applications to wet the surface of the soil, making it ideal for crops that require water close to the surface or in areas with shallow root systems. Crops like vegetables, legumes, and grasses that have shallow root systems and don't need deep soil moisture.

Benefits for Rainfed Areas :

Water Conservation: By reducing irrigation during less critical growth periods, it helps conserve water, which is vital in regions with limited water resources.

Cost-Effective: Reducing water usage translates to lower water and energy costs, particularly for farmers relying on groundwater

or costly irrigation infrastructure.

Climate Resilience: It can increase the resilience of crops to climate variability and drought, which is a growing concern for rainfed agriculture in many parts of the world.

Sustainable Agriculture: It promotes more sustainable farming practices, reducing the environmental impact of over-irrigation and ensuring long-term soil health.

Challenges:

Yield Reduction: While deficit irrigation can optimize water use, it can lead to reduced yields if not managed properly.

Crop Sensitivity: Different crops have different tolerance levels to water stress, and the timing of deficit irrigation must be precisely managed.

Soil Health: Continuous deficit irrigation can lead to soil degradation if not combined with other soil management techniques.

What makes Deficit Irrigation different from Life saving Irrigation?

Deficit irrigation and life-saving irrigation are two irrigation strategies used in agriculture, but they differ in their purpose, application, and intensity of water usage. Here's a breakdown of the key differences between the two:

Sl. No.	Particulars	Deficit Irrigation	Life saving Irrigation
1.	Definition	It is a planned and controlled strategy where less water than the crop's full water requirement is applied. The goal is to maximize water use efficiency by allowing some degree of water stress, particularly during non-critical growth stages, while still maintaining a reasonable crop yield.	Life-saving Irrigation: This refers to a type of irrigation applied under emergency conditions, typically when a crop is at risk of dying due to severe drought or water shortage. The primary goal is to save the crop from irreversible damage, often by supplying just enough water to prevent crop death
2.	Purpose	To optimize water usage under limited water conditions, reduce water consumption, and still achieve a sustainable crop yield. It's a long-term strategy to manage water resources efficiently in regions with limited water availability.	To prevent immediate crop failure due to extreme drought conditions. It is applied as a last-resort measure to save the crop from dying, and its use is typically not planned in advance.
3.	Water Application	Water is applied in amounts lower than the crop's full water requirement, but not necessarily under critical conditions. It can be applied during periods of less sensitivity to water stress, like the vegetative stage of a crop.	Water is applied when the crop is critically dehydrated and at risk of dying. It is typically a large, emergency irrigation application meant to alleviate immediate water stress, often aimed at just keeping the plant alive.
4.	Timing	The application is scheduled during specific growth phases where the crop is less sensitive to water stress, such as during early vegetative growth or late maturity.	This irrigation is applied during periods of acute water shortage, usually during reproductive or flowering stages when the crop is most vulnerable to drought damage.

Sl. No.	Particulars	Deficit Irrigation	Life saving Irrigation
5.	Water Efficiency	DI is aimed at improving water use efficiency (WUE), where less water is used to produce a good yield. The goal is to balance water conservation with maintaining reasonable crop yields.	The focus is not on maximizing water efficiency but simply on preventing crop loss by supplying enough water to keep the plant alive.
6.	Long-term vs. Short-term	DI is a long-term, strategic practice to deal with water scarcity and optimize production over the course of a season or multiple growing seasons.	This is a short-term, emergency intervention meant to address immediate water stress that could otherwise lead to crop failure.
7.	Crop Response	Crops might experience mild to moderate stress, but the goal is to ensure that this does not affect yield drastically. Some yield reduction may occur, but the crop can still survive and produce a reasonable output.	The goal is to prevent death or irreversible damage. It often doesn't lead to optimal growth, but it saves the crop from complete failure. Yields may still be significantly reduced, but the crop is not lost.
8.	Examples	Applied to crops like cotton, maize, or wheat, where a controlled reduction in water during certain growth stages can help conserve water without severely impacting yield.	Used when a drought hits unexpectedly, and crops like rice, maize, or vegetables are severely stressed. Life-saving irrigation would be applied to prevent the crops from dying, especially if they are in a critical stage like flowering or fruit-setting.

Deficit irrigation is a valuable tool for managing water resources efficiently in rainfed areas, offering a sustainable solution to water scarcity while maintaining crop productivity. However, its success depends on careful management, including understanding of crop water requirements, local climate conditions, and appropriate irrigation methods. In deficit irrigation, several tools, technologies, and practices are utilized to optimize water use, conserve resources, and maintain crop yield despite limited water availability. These tools and methods help manage water distribution effectively, monitor soil moisture, and ensure crop survival. Deficit irrigation technologies have a broad range of applications that help optimize water use and improve agricultural sustainability. When applied correctly, they can maintain or even improve crop yields while conserving water resources, making them especially valuable in regions with limited water availability.

Fig.1. Deficit irrigation through drip irrigation

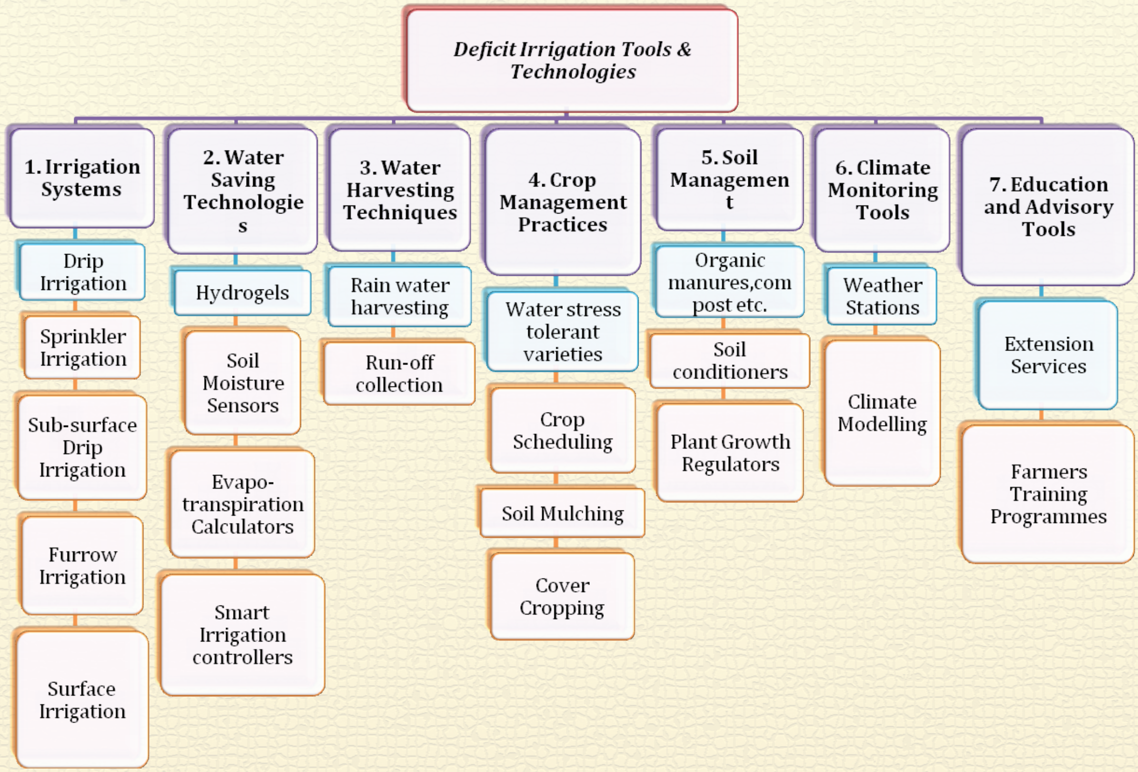

Fig.2. Schematic showing Tools and Technologies employed under Deficit Irrigation

Battling Bacterial Wilt in Brinjal: What Farmers Need to Know

Souvik Bhattacharjeeand Pankaj Kumar Mishra
Ph.D. Scholar (Plant Pathology), Ramakrishna Mission Vivekananda Educational and Research Institute, Morabadi, Ranchi-834008, Jharkhand

What is Bacterial wilt?

Wilt diseases, caused by pathogens like bacteria, fungi, and nematodes, affect the plant's vascular system. These pathogens invade the xylem vessels responsible for water transport and multiply there, resulting in blockages. Typical signs include wilting and leaf death, often progressing to severe damage or death of the whole plant. Although bacterial and fungal wilts share similar visible symptoms, bacterial wilt can be identified in the field through a technique known as "Ooze Test". This involves dipping the cut end of an infected stem in water, where a cloudy exudate, visible to the naked eye, indicates bacterial presence as it oozes from the tissue surface.

Overview of Bacterial Wilt in Brinjal

- **Type of Infection:** Bacterial Disease
- **Common Name:** Bacterial Wilt
- **Causal Organism:** *Ralstoniasolanacearum*
- **Affected Plant Parts:** Vascular system, leaves

Ooze Out Test

Test for the presence of the pathogen, longitudinal sections of the collar region containing vascular tissues from infected plants were placed in a test tube with clean water. Within minutes, infected tissue released fine, milky-white strands, composed of bacterial masses, which oozed from the edges of the cut section.

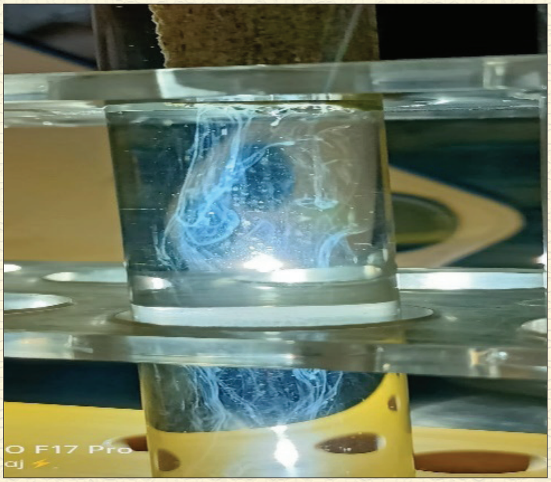

Figure 1. Oozing from an infected stem

Symptoms

- Typical symptoms include wilting, stunted growth, and yellowing of the foliage, eventually leading to the collapse of the entire plant.
- Lower leaves may start drooping before full wilting occurs.
- Browning of the vascular system is commonly observed.
- Plants often show wilting during midday but temporarily recover at night, ultimately leading to plant death.

How Does the Disease Spread?

The bacteria can persist in the soil for extended periods, even without host plants present, and can be transmitted through contaminated soil, water, plant debris, and equipment. Infected seedlings or polluted irrigation water can also introduce the disease into healthy crops

Management Strategies

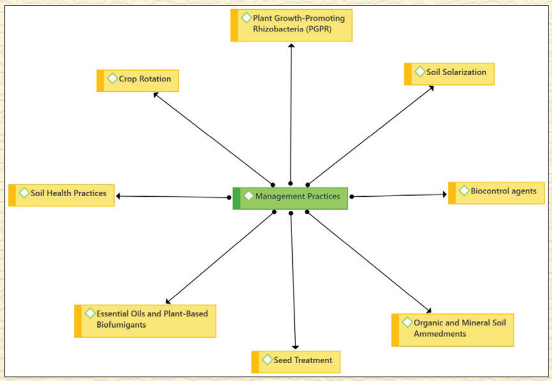

Figure 2 sudden wilting of plants

- **Crop Rotation:** Rotate with non-host crops like cruciferous vegetables (e.g., cauliflower) or cereals to reduce soil pathogen levels.
- **Soil Solarization:** Solarize soil for 6–8 weeks during hot months to reduce *Ralstoniasolanacearum* population.
- **Biocontrol Agents:**
  - Use beneficial bacteria such as *Bacillus cereus*, *Pseudomonas fluorescens*, and *Pseudomonas putida* as seedling dip for disease suppression.

- Treat seedlings with antagonistic bacteria or bacteriophages before transplanting.

- **Organic and Mineral Soil Amendments:**
  - Add neem cake, mineral ash, or S-H mixture (silicon and calcium-rich) to soil.
  - Use cow urine, tobacco leaf decoction, or asafoetida(Hing)-turmeric mixture as natural disease suppressants.

- **Plant Growth-Promoting Rhizobacteria (PGPR):**
  - Apply rhizobacteria (e.g., *Serratia, Bacillus* spp.) to promote plant growth and increase resistance.
  - Use PGPR formulations, which can remain effective in storage for up to a year.

- **Essential Oils and Plant-Based Biofumigants:**
  - Use thymol, palmarosa oil, or lemongrass oil in soil amendment for pathogen suppression.
  - Cover treated soil with plastic mulch for enhanced effect before planting.

- **Soil Health Practices:**
  - Amend soil with vesicular-arbuscular mycorrhizae (e.g., *Glomus mosseae*) to stimulate systemic resistance and phenolic compound production.

- **Seed Treatment:**
  - Treat seeds with Pseudomonas fluorescens for enhanced quality and reduced field incidence.

आत्मनिर्भर कृषि
आत्मनिर्भर भारत
IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives
सहकार से समृद्धि
फसल उपज एवं गुणवत्ता मे वृद्धि
पारंपरिक यूरिया से सस्ता
मिट्टी-जल-वायु प्रदूषण रहित
भंडारण एवं परिवहन मे सुविधा
जैव-सुरक्षित एवं पर्यावरण हितैषी
कीट व बीमारियों का प्रकोप कम
NANO FERTILISER FCO Approved नैनो उर्वरक
NANO UREA PLUS
Price Rs 225/- Per Bottle
ड्रोन से छिड़काव हेतु संपर्क करें
महेश कुमार - 8539016009/7991153881
श्रवण कमार - 8271212700/9304482563
अब इफको नैनो फर्टिलाइजर पर भी "संकट हरण बीमा" उपलब्ध
अधिक जानकारी व खरीदने हेतु
इंडियन फारमर्स फर्टिलाइजर को-ऑपरेटिव लिमिटेड, एम-1 डी/एस
हरमू हाउसिंग कॉलोनी, राँची, झारखण्ड - 834002
वेबसाइट: www.nanourea.in
ऑनलाइनखरीदनेहेतु: www.iffcobazar.in
ग्राहकसेवाहेल्पलाइननंबर(टोलफ्री): 18001031967
'इफको किसान उदय' मोबाइल एप डाउनलोड करने हेतु स्केन करें।

आत्मनिर्भर कृषि
आत्मनिर्भर भारत
IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives
सहकार से समृद्धि
1 बोरी डी.ए.पी. 500 मी. ली. बोतल में
पर्यावरण हेतु सुरक्षित।
एक बोतल एक बोरी के बराबर।
अंकुरण, उपज एवं गुणवत्ता बढ़ाए।
इफको सागरिका, जल विलेय उर्वरक एवं कीटनाशी से अच्छा सामंजस्य।
Price Rs 600/- Per Bottle
ध्यान दें :-
प्रयोग के पूर्व बोतल को अच्छे तरह से हिलाएं।
छिड़काव हमेशा गुनगुने धूप में ही करें।
छिड़काव बैट्री चालित स्प्रेयर से ही करें।
स्प्रे के 8-12 घंटों के अन्दर बारिश होने पर छिड़काव को दोहराएं।
IFFCO NANO DAP LIQUID (8:16:0)
ड्रोन से छिड़काव हेतु संपर्क करें
महेश कुमार - 8539016009/7991153881
श्रवण कमार - 8271212700/9304482563
अब इफको नैनो फर्टिलाइजर पर भी "संकट हरण बीमा" उपलब्ध
अधिक जानकारी व खरीदने हेतु
इंडियन फारमर्स फर्टिलाइजर को-ऑपरेटिव लिमिटेड, एम-1 डी/एस
हरमू हाउसिंग कॉलोनी, राँची, झारखण्ड - 834002
वेबसाइट: www.nanourea.in
ऑनलाइनखरीदनेहेतु: www.iffcobazar.in
ग्राहकसेवाहेल्पलाइननंबर(टोलफ्री): 18001031967
'इफको किसान उदय' मोबाइल एप डाउनलोड करने हेतु स्केन करें।

पीवीयूएन
PVUN

पतरातु
PATRATU

Progress that touches every corner of Jharkhand

Skill Development Training

Medical support

Educating young Girls

Constructed Multipurpose Hall

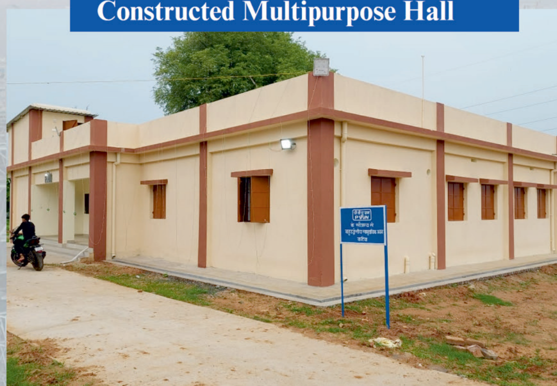

Distribution of Bike for Patrolling

Scholarship

PATRATU VIDYUT UTPADAN NIGAM LIMITED

(A Subsidiary of NTPC in JV with JBVNL)